संस्कृत-

मन्दाकिनी

द्वितीयो भागः

द्वादशवर्गीय संस्कृतस्य पाठ्यपुस्तकम्

(विज्ञानवाणिज्य-छात्रेभ्यः)

संपावक

कमलाकान्त मिश्र

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
मार्च 2003
फाल्गुन 1924

ISBN 81-7450-182-7

PD 10T DRH

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस	108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी.डब्लू.सी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेंशन बनाशंकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	निकट : धनकल बस स्टॉप
नई दिल्ली 110 016	बेंगलूर 560 085	अहमदाबाद 380 014	पनिहटी, कोलकाता 700 114

प्रकाशन सहयोग

सम्पादन : दयाराम हरितश
उत्पादन : कल्याण बैनर्जी

आवरण
बालकृष्ण

रु. 15.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटर मार्क 70 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा तरंग प्रिंटर्स, बी-50 कृष्ण कुञ्ज एक्सटेंशन, पार्ट-2, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110 092 द्वारा मुद्रित।

पुरोवाक्

भारतीयशिक्षाव्यवस्थायां संस्कृतभाषायाः महत्त्वं सर्वैरेव स्वीक्रियते। अत्र ज्ञानं विज्ञानम् उभयमेव प्रचुरतया विद्यते। अत एव विद्यालयेषु संस्कृतशिक्षणार्थम् आदर्शपाठ्यक्रमंपाठ्यपुस्तकादीनां विकासक्रमे राष्ट्रियशैक्षिकानुसन्धान-प्रशिक्षणपरिषदः सामाजिकविज्ञानमानविकीशिक्षा-विभागेन षष्ठकक्षातः द्वादशकक्षापर्यन्तं नवीनराष्ट्रिय-पाठ्यचर्यानुरूपम् आदर्शपाठ्यक्रमं निर्माय संस्कृतपाठ्यपुस्तकानि विकास्यन्ते। तदनुसारमेव, प्रमुखसंस्कृतग्रन्थेभ्यः गद्य-पद्य-नाटकमयान् उपयुक्तांशान् संकलय्य भूमिका-टिप्पणीभिश्च समलङ्कृत्य विज्ञान-वाणिज्याध्येतृणां द्वादशवर्गीयविद्यार्थिनां कृते प्रस्तूयतेऽधुना **संस्कृत मन्दाकिनी द्वितीयो भागः** नाम नूतनं पुस्तकमिदम्।

आशास्यते, अनेन विद्यार्थिनां संस्कृतभाषाज्ञानेन सहैव तन्निहितानाम् आयुर्विज्ञानं-खगोलविज्ञान-जलविज्ञान-खनिजविज्ञानार्थशास्त्रादीनां भारतीयमनीषिणां विविधवैज्ञानिक-वाणिज्यिकविषयेषु तेषां विशिष्टयोगदानस्य मौलिकचिन्तनस्य च परिचयो भविष्यतीति। छात्रेषु जीवनमूल्यविकासाय अपेक्षितसुभाषितादिसामग्री अपि अत्र समाविष्टा।

अस्य पुस्तकस्य निर्माणे येषां विदुषाम् अनुभविनाम् अध्यापकानाञ्च सहयोगः सम्प्राप्तः तान् प्रति परिषदियं हार्दिकीं कृतज्ञतां ज्ञापयति। पुस्तकम् उपयुक्ततरं विधातुं विद्वद्वरेण्यानां शिक्षकाणाञ्च सत्परामर्शाः सदैव अस्माकं स्वागतार्हाः भवेयुः।

जगमोहनसिंहराजपूतः
निदेशकः
राष्ट्रियशैक्षिकानुसंधानप्रशिक्षणपरिषद्

नवदेहली
नवम्बर 2002

गांधी जी का जंतर

तुम्हें एक जंतर देता हूँ। जब भी तुम्हें संदेह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आज़माओ :

जो सबसे गरीब और कमज़ोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुँचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानी क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा, जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संदेह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

भूमिका

संस्कृत विश्व की प्राचीनतम एवं प्रमुख भाषाओं में से एक है। भाषावैज्ञानिकों ने इस भाषा को सब प्रकार से परिपूर्ण भाषा माना है। ऋग्वेद के रचनाकाल से लेकर आज तक इस भाषा में निरन्तर साहित्य सृजन होता चला आ रहा है। इसमें बाह्य एवं आभ्यन्तर प्रकृति के बारे में जितना विशाल एवं सूक्ष्म चिंतन उपलब्ध होता है उतना सम्भवतः अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। वेद, वेदाङ्ग, दर्शन, धर्म, नीति, सामाजिक जीवन, वैज्ञानिक एवं व्यावसायिक शास्त्रों, पुराणों एवं काव्यात्मक कथाओं के समावेश से संस्कृतवाङ्मय एक विशाल ज्ञानराशि का संचित कोश है। यद्यपि भारत की सामाजिक परिस्थिति के कारण वर्तमान में संस्कृत वाङ्मय का सर्वविध साहित्य उपलब्ध नहीं है तथापि ज्ञानविज्ञान एवं मानविकी के आधारग्रन्थ यहां प्राप्य हैं।

भारोपीय भाषापरिवार ने संस्कृत को अपना आदर्श माना यह बात चाहे जितनी भी महत्त्वपूर्ण हो किन्तु हम भारतीयों के लिए तो राष्ट्रीय एकता के दृष्टिकोण से संस्कृत भाषा सर्वाधिक सशक्त साधन है। प्रादेशिक भाषाओं के लिए तो, द्रविड़ भाषा परिवार के अतिरिक्त, संस्कृत सभी भारतीय भाषाओं की जननी है। द्रविड़ भाषापरिवार ने भी शब्दसम्पत्ति एवं विषयवस्तु यथेच्छरूप से संस्कृत से ली है। इस प्रकार संस्कृत भाषा भाषिक एवं भावात्मक दृष्टिकोण से अरुणाचल से गुजरात तथा केरल से कश्मीर पर्यन्त भारत को एकता के सूत्र में आबद्ध कर देती है। "यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्" "वसुधैव कुटुम्बकम्" जैसी उदात्त धारणाओं का प्रसार करने के कारण संस्कृत, विश्वशान्ति तथा सर्वधर्मसमभाव की भाषा मानी जाती है। यही बात है कि यथार्थ रूप में शिक्षित होने के लिए संस्कृत का ज्ञान परम अपेक्षित है। आधुनिक शिक्षा की व्यवसायोन्मुखता के कारण पाठ्यविषयों का जो वर्गीकरण करना होता है, उसके अनुसार संस्कृत के

व्यापक ज्ञान से बहुत से विद्यार्थी वंचित रह जाते हैं। इन्हीं में विज्ञान एवं वाणिज्य के विद्यार्थी भी सम्मिलित हैं। इस कमी को दूर करने के दृष्टिकोण से, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार की प्रेरणा से, केंद्रीय विद्यालय संघठन एवं केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से सम्बद्ध विद्यालयों के विज्ञान एवं वाणिज्य विषय पढ़ने वाले उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्रों के लिए, ऐच्छिक संस्कृत का एक विशेष पाठ्यक्रम तैयार किया है। परिषद् द्वारा प्रकाशित "विद्यालयीय शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपेरखा–2000" के आलोक में विकसित, नवीन पाठ्यक्रम की अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए, उच्चतर माध्यमिक स्तर के विज्ञान एवं वाणिज्य विषयों के छात्रों को संस्कृत के वाग्वैभव एवं उसमें निहित ज्ञानविज्ञान से परिचित कराने के लिए **संस्कृत-मन्दाकिनी** नामक पाठ्यपुस्तक की रचना की गई है। पुस्तक का प्रथम भाग ग्यारहवीं कक्षा में पढ़ाया जा रहा है। उसी पुस्तक का यह द्वितीय भाग है, जिसे बारहवीं कक्षा में पढ़ाया जाना है।

प्रस्तुत सङ्कलन

संस्कृत-मन्दाकिनी द्वितीयो भागः नामक इस पाठ्यपुस्तक में संस्कृतभाषा के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों से कुछ उद्धरण, पुस्तक के पाठों के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं। ये उद्धरण, मानवसुखसमृद्धि, लोक आराधना, ज्ञानविज्ञान, ऐतिहासिककथा, लोककथा, सुभाषितरत्न, पूर्वकालिक अर्थव्यवस्था, स्वास्थ्यरक्षा एवं ऋणवृद्धि प्रबन्धन आदि विषयों पर प्रकाश डालते हैं। इन पाठों के अध्ययन के माध्यम से विद्यार्थी जहाँ विविध विषयों पर प्राचीन अवधारणाओं से अवगत होता है, वहीं उसे संस्कृत के अनेक विचारकों, कवियों आदि के बारे में तथा ग्रन्थों के बारे में भी जानकारी प्राप्त होती है। यह जानकारी उसके जीवन के उत्थान में बहुत उपयोगी सिद्ध होती है।

संकलन के स्रोत

संस्कृत साहित्य की विशाल परम्परा से इस संकलन में वेद, काव्य, पद्य, नाटक से प्रतिनिधिभूत अंश संकलित हैं। जिन ग्रन्थों से ये पाठ्यांश संकलित हैं उनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार हैं–

वेद : वेद विश्व का प्राचीनतम साहित्य और विशालतम ज्ञान-भंडार है। इसमें धर्म से लेकर आचार तक, कला से लेकर व्यापार तक और नीति एवं व्यवहार से लेकर अध्यात्म तक के समस्त विषय वर्णित हैं। इसीलिए वेद ज्ञान है, वेद विचार है, वेद अस्तित्व है और वेद उपलब्धि है – ऐसा निर्वचनकारों का मत है। अधिकांश विद्वानों के अनुसार वेदों का रचना काल प्रायः 2000 ई.पू. माना गया है। महर्षि कृष्ण द्वैपायन व्यास ने इसे चार भागों में संकलित किया है – ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद।

ऋग्वेद : ऋग्वेद में स्तुतिपरक तथा अर्चनाप्रधान मंत्रों का संकलन किया गया है। इसमें कुल 10 मंडल, 1028 सूक्त तथा 10580 ऋचाएँ हैं।

यजुर्वेद : यजुर्वेद गद्यप्रधान है। यह यज्ञ कर्म के लिए प्रसिद्ध है। इसकी दो प्रमुख शाखाएँ हैं–**शुक्लयजुर्वेद** और **कृष्णयजुर्वेद**। शुक्लयजुर्वेद में 85 शाखाएँ हैं जिसमें वाजसनेयी शाखा के अन्तर्गत काण्वशाखा प्राप्त है। इस शाखा में मंत्रों की संख्या 2086 है। वाजसनेयी शाखा की दूसरी शाखा माध्यन्दिन है जिसमें 1975 मन्त्र हैं। अद्यावधि यह अनुपलब्ध है। कृष्णयजुर्वेद की चार संहिताएँ उपलब्ध हैं– तैत्तिरीय, मैत्रायणी, कठ और कपिष्ठल-कठ। तैत्तिरीय संहिता में 7 काण्ड, 44 प्रपाठक, 631 अनुवाक तथा 2198 मन्त्र हैं। इसमें भी शुक्लयजुर्वेद के समान विविध यज्ञों का वर्णन है। मैत्रायणी संहिता में 4 काण्ड, 54 प्रपाठक तथा 2144 मन्त्र हैं। कठ संहिता 40 स्थानकों में विभक्त है जिसमें 843 अनुवाक और 3091 मन्त्र हैं। कपिष्ठलसंहिता अपूर्ण रूप में प्राप्त है। यह 6 अष्टकों में विभक्त है जिसमें 48 अध्याय हैं।

सामवेद : सामवेद का महत्त्व संगीत की दृष्टि से बहुत अधिक है। इस वेद में कुल 1875 मन्त्र हैं जो पूर्वार्चिक तथा उत्तरार्चिक भागों में क्रमशः 650 तथा 1223 मन्त्रों में विभक्त हैं।

अथर्ववेद : अथर्ववेद के मन्त्रों के द्रष्टा ऋषि अथर्वा है। यह 20 काण्डों में विभक्त है जिसमें 730 सूक्त तथा 5987 मन्त्र हैं। इस वेद में मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, औषधि, राजनीति, राज्यपालन और ईश्वराराधन के बड़े ही उपयोगी मन्त्र सङ्गृहीत हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता : यह वेदव्यास द्वारा रचित महाभारत के भीष्मपर्व में "श्रीमद्भगवद्गीता प्रारम्भ" उपपर्व के रूप में 18 अध्यायों का ग्रन्थ है जो अपने आप में संस्कृत भाषा की सर्वाधिक लोकप्रिय रचना है। महाभारत का रचना काल 500 ई.पू. से 200 ई.पू. माना गया है। इसे सभी उपनिषदों का सार कहा गया है। महाभारत युद्ध के आरम्भ में पाण्डव सेनापति अर्जुन के मन में उत्पन्न विषाद को शान्त कर, उसे उत्साहित करने के लिए भगवान् कृष्ण कर्मयोग का उपदेश देते हैं। इसमें जीवन की सभी समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए आध्यात्मिक जीवन का उत्कर्ष दिखाया है जिसमें कर्म ज्ञान और भक्ति तीनों का समन्वय है। ये तीनों मोक्षमार्ग परस्पर विरोधी नहीं हैं अपितु एक दूसरे के पूरक हैं। इसीलिए इन्हें योग कहा गया है।

उत्तररामचरित : यह भवभूति विरचित नाटकों में श्रेष्ठ है। कवित्व तथा नाट्य कौशल दोनों का प्रकर्ष इसमें प्रकट किया गया है। पूरे नाटक में राम का चरित्र, शील, सत्य और शक्ति का उत्स बनकर प्रकाशित हुआ है। रामायण के उत्तरकाण्ड के सीता-निर्वासन के कथानक पर यह आश्रित है। इसमें 7 अङ्क हैं। यह भवभूति के गम्भीर स्वभाव के उत्कर्ष का द्योतक है जिसमें करुण रस की प्रधानता है। सम्पूर्ण नाटकों में इसे करुण रस का एक मात्र एकाङ्गीण नाटक माना जाता है। इसकी रचना 750 ई. में हुई थी।

सिद्धान्तशिरोमणि : भास्कराचार्य द्वारा रचित सिद्धान्तशिरोमणि खगोलविद्या (Astronomy) का एक वृहत्काय ग्रन्थ है। इसके दो भाग हैं– 1. गणिताध्याय और 2. गोलाध्याय। गणिताध्याय में पाटीगणित, अङ्कगणित, महत्त्वमापन (क्षेत्रफल, घनफल आदि का) बीजगणित, भिन्नपरिकर्माष्टक आदि अनेक विधियाँ स्पष्ट की गई हैं। गोलाध्याय भास्कराचार्य की बौद्धिक प्रगलभता का मूर्तरूप है। इसमें गोल की प्रशंसा, भूकेंद्रित होकर खगोल का विवेचन, ज्योत्पत्ति, त्रिप्रश्न में दिशादेशकाल आदि का ग्रहण, ग्रहों के उदय एवं अस्त का विवेचन, ऋतुवर्णन, यन्त्रविज्ञान तथा खगोलीय प्रश्नों का समाधान किया गया है। भास्कराचार्य का जन्म 1114 ई. में हुआ एवं 36 वर्ष की आयु में इन्होंने सिद्धान्तशिरोमणि जैसे वृहत्काय ग्रन्थ की रचना की।

रघुवंश : कालिदास का दूसरा महाकाव्य रघुवंश है। परम्परा के अनुसार यह 19 सर्गों का श्रेष्ठ काव्य है। इस काव्य में कवि ने सूर्यवंश के विभिन्न राजाओं का वर्णन किया है जिनमें दिलीप, अज, दशरथ, राम और कुश का विस्तृत वर्णन है। कवि ने इनके पराक्रमों का उदात्त रूप में वर्णन किया है। इस महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में दिलीप की गो-सेवा, चतुर्थ सर्ग में रघु की दिग्विजय यात्रा, षष्ठ सर्ग में इन्दुमती के स्वयंवर एवं त्रयोदश सर्ग में राम के अयोध्या लौटने का वर्णन अतीव उज्ज्वल बन पड़ा है। इस ग्रन्थ के अन्तिम उन्नीसवें सर्ग में राजा अग्निवर्ण के विलासमय जीवन का चित्रण है। इस सर्ग में रघुवंश के पतन काल का प्रारम्भ हो गया था। रघुवंश का रचनाकाल प्रायः प्रथम शताब्दी ई.पू. माना गया है।

पञ्चतन्त्र : यह विष्णुशर्मा के द्वारा रचित नीतिकथा ग्रन्थ है। पञ्चतन्त्र का मुख्य भाग गद्यात्मक है। इसका रचनाकाल प्रायः दूसरी शताब्दी से छठी शताब्दी तक माना जाता है। कथाएँ गद्य में ही कही गई हैं किन्तु कहीं-कहीं निष्कर्ष पद्य में भी हैं। पद्यों में अधिकांशतः सूक्तियाँ हैं जो पाठकों को कण्ठाग्र कर लेने पर नीतिशास्त्र में प्रवीणता प्रदान करती हैं। इसमें पाँच खण्ड या तन्त्र हैं– मित्रभेद (22 कथाएँ), मित्रसंप्राप्ति (6 कथाएँ), काकोलूकीय (16 कथाएँ), लब्धप्रणाश (11 कथाएँ) तथा अपरीक्षितकारक (14 कथाएँ)। मुख्य 6 कथाओं को जोड़ने से कुल 75 कथाएँ होती हैं। इसी प्रकार पद्यों की संख्या प्रायः 1100 हैं। प्रत्येक तन्त्र में मुख्य कथा को अवान्तर कथाओं से सजाया गया है।

बृहत्संहिता : यह सिद्धान्त एवं फलित ज्योतिष का संयुक्त एवं विशाल ग्रन्थ है। इसके रचयिता वराहमिहिर हैं जिन्होंने इसकी रचना 550 ई. के आसपास की। इसमें 106 अध्याय हैं। इसमें सूर्य, चन्द्र तथा अन्य ग्रहों की गतियों एवं ग्रहण आदि का पृथ्वी तथा मानव पर प्रभाव, वर्षफल (गोचर), ऋतु के लक्षण, कृषि उत्पादन, वस्तुओं के मूल्य, वास्तुविद्या में ज्योतिष का महत्त्व इत्यादि विषयों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें भारतीय भूगोल का निरूपण भी मिलता है।

नीतिशतक– महाकवि भर्तृहरि ने तीन शतकों की रचना सातवीं शताब्दी में की। इनके नाम है–नीतिशतक, शृंगारशतक तथा वैराग्यशतक। तीनों में एक-एक सौ पद्य हैं। नाम के अनुरूप ही इनके विषय भी हैं। नीतिशतक व्यावहारिक जीवन की सम-विषम परिस्थितियों का सुन्दर चित्रण करता है। इसमें मूर्खनिन्दा, सज्जनों की प्रशंसा, परोपकार, धैर्य, दैव (भाग्य) तथा कर्म की महिमा से सम्बद्ध अनेक पद्य हैं। नीतिशतक संस्कृत कविता का अनुपम गीतिकाव्य है।

अर्थशास्त्र : इसके प्रणेता आचार्य कौटिल्य राजनीति पारंगत, नीतिसम्राट् एवं मौर्यसाम्राज्य विस्तार के महानायक थे। इसकी रचना 300 ई.पू. में की गई थी। उनकी मति एवं युक्तियों के आश्रय से मगध के शक्तिशाली नन्दवंश को नष्ट कर तथा शक्तिशाली यवनराज सिकन्दर के राज्यविस्तार के प्रयासों को विफल कर चन्द्रगुप्त मौर्य सम्राट् कहलाए। लोक में चणक के पुत्र होने के कारण यह चाणक्य नाम से प्रसिद्ध हुए। वस्तुतः इनका पितृप्रदत्त नाम विष्णुगुप्त था।

इनका अर्थशास्त्र अपने आप में एक विशिष्ट ग्रन्थ है। डा. शाम शास्त्री ने इसका अंग्रेज़ी भाषा में अनुवाद किया है। इन अधिकरणों में *कुल 150 अध्याय एवं 180 प्रकरण हैं, जिनमें विनयाधिकार से लेकर* अर्थशास्त्र के सभी विषयों का पूर्ण विवेचन किया गया है। जिन मुख्य विषयों का वर्णन है, वे इस प्रकार हैं– अध्यक्ष प्रचार, दायभाग, कण्टकशोधन, दण्डव्यवस्था, मण्डलविवेचन, षाड्गुण्य का उद्देश्य, क्षय, स्थान एवं वृद्धि, अभियास्यत्कर्म, संग्राम एवं छावनियों की व्यवस्था भेदक प्रयोग, दुर्गलम्भोपाय एवं शत्रुवध के प्रयोग। मुख्यतः अर्थशास्त्र, की युक्तियों का प्रतिपादक होते हुए भी यह ग्रन्थ अर्थशास्त्र राजनीतिशास्त्र एवं वाणिज्यशास्त्र का मिश्रित रूप है।

अष्टाङ्गहृदय : वाग्भट ने चिकित्साशास्त्र से सम्बन्धित दो ग्रन्थों की रचना की–अष्टाङ्गसंग्रह और अष्टाङ्गहृदय। अष्टाङ्गहृदय में 6 स्थान हैं जिसमें कुल 120 अध्याय हैं। यह 7444 पद्यों का ग्रन्थ है। यह अत्यन्त लोकप्रिय ग्रन्थ है। इसकी रचना 500 ई. से 600 ई. के बीच में की गई थी। इसमें आयुर्वेद का सार प्रस्तुत है जिसमें चिकित्सोपयोगी सभी

तथ्यों का व्यावहारिक रूप में सन्निवेश किया गया है। इसकी विषयवस्तु का वर्णन 6 स्थानों में विभक्त है–

1. सूत्रस्थानम्, 2. शारीरस्थानम्, 3. निदानस्थानम्, 4. चिकित्सितस्थानम्, 5. कल्पसिद्धिस्थानम्, 6. उत्तरस्थानम्

पाठों की विषयवस्तु

1. **दैवी सम्पद्** : यह विश्वविख्यात दार्शनिक ग्रन्थ श्रीमद्भगवद् गीता से उद्धृत किया गया है। महाभारत युद्ध के आरम्भ में विषाद में पड़े हुए अर्जुन को श्रीकृष्ण ने "गीता" नाम से जीवन संघर्षों . से हँसते–हँसते जूझने की कला को समझाया था। गीता महर्षि वेदव्यास रचित महाभारत के भीष्म पर्व का ही एक अंश है।
2. **रामस्य लोकाराधनम्** : यह पाठ करूणरस के सिद्धकवि भवभूति के "उत्तररामचरितम्" नामक संस्कृत नाटक से लिया गया है। संस्कृत साहित्य में करुण रस की उद्दीप्ति के लिए यह नाटक बहुत प्रसिद्ध है जिसमें राम के लोकाराधक रूप का सुन्दर चित्रण है।
3. **खगोलविज्ञानम्** : भास्कराचार्य (द्वितीय) द्वारा रचित 'सिद्धान्त शिरोमणि' नामक ग्रन्थ इस बात का प्रमाण है कि प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक अन्तरिक्ष के गहन रहस्यों को कितनी सूक्ष्मता से जान चुके थे। यह पाठ उसी ग्रन्थ से लिया गया है।
4. **रघूणामन्वय** : यह पाठ कविकुलगुरु कालिदास द्वारा रचित 'रघुवंश' नामक महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत किया गया है। यह काव्यग्रन्थ संस्कृत साहित्य के शीर्षस्थ रचनाओं में से एक है जिसमें भारत के राजाओं के आदर्श चरित्र का चित्रण है।
5. **सिंह-शृगालपुत्रयोः कथा** : यह कथा 'पञ्चतन्त्रम्' नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ से ली गई है। इसके रचयिता का नाम आचार्य विष्णुशर्मा है। पशु-पक्षी आदि की कथाओं के माध्यम से नैतिक, राजनैतिक, कूटनैतिक एवं व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करने के

लिए पञ्चतन्त्र जैसी अन्य पुस्तक शायद ही कोई और हो। सभ्य देशों की प्रायः सभी भाषाओं में इस पुस्तक का पूर्णतः अनुवाद हो चुका है।

6. **प्राचीनं जलविज्ञानम् :** वराहमिहिर की "बृहत्संहिता" संस्कृत के वैज्ञानिक साहित्य में विशेष स्थान रखती है। इसमें भौतिक विज्ञान की अनेक शाखाओं की बहुत अच्छी जानकारी दी गई है। यह पाठ वहीं से लिया गया है जिसमें पृथ्वी के अन्तर्निहित जल की धाराओं का वैज्ञानिक वर्णन है।

7. **सुभाषितसञ्जीवनी :** सुभाषित का अर्थ है, सुन्दर वचन। न केवल भारत में, अपितु विश्व के अधिकतर देशों में संस्कृत के सुभाषित बहुत लोकप्रिय हैं। "नीतिशतकम्" नामक कृति हृदयग्राह्य सुभाषितों का उत्तम भण्डार है। इसके रचयिता भर्तृहरि हैं। इनकी "शृङ्गारशतकम्" तथा "वैराग्यशतकम्" नामक कृतियाँ भी इसी स्तर की हैं। यह पाठ "नीतिशतकम्" से लिया गया है। विद्यार्थियों को नैतिक शिक्षा के सरल सुभाषित इस पाठ में मिलेंगे।

8. **व्यवसाये विक्रयसिद्धान्तविवेचनम् :** "चाणक्य" विश्वप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ थे। इनको कौटिल्य नाम से भी जाना जाता है। इनकी "अर्थशास्त्र" नामक रचना, समाजशास्त्र के विविध अङ्गों का विद्वत्तापूर्ण विवेचन करती है। अर्थ शब्द का अभिप्राय यहाँ, "धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष" नामक चारों पुरुषार्थों से है। यह पाठ उसी रचना से लिया गया है।

9. **स्वास्थ्यरक्षणोपाया :** यह पाठ आयुर्वेद के "अष्टाङ्गहृदयम्" नामक ग्रन्थ से उद्धृत किया गया है। आयुर्वेद रोगों की चिकित्सा मात्र का शास्त्र ही नहीं है अपितु रोग क्यों उत्पन्न होते हैं तथा उनकी उत्पत्ति को रोकने के लिए हमारा आचार कैसा होना चाहिए तथा औषध का प्रयोग कैसे हो, इस प्रकार की शिक्षा का विश्वकोष है। स्वास्थ्य रक्षा कैसे की जा सकती है ? यह पाठ इस बात पर प्रकाश डालता है।

10. **खनिज-गवेषणम्** : यह पाठ भी कौटिल्य के अर्थशास्त्र से ही लिया गया है। खानों में छिपी हुई भूसम्पदा की जानकारी, इस पाठ के अध्ययन से प्राप्त होती है।

11. **ऋणवृद्धिप्रबन्ध** : इस पाठ का स्रोत भी चाणक्य का अर्थशास्त्र ही है। इस पाठ के अध्ययन से, चाणक्यकालीन समाज में ऋण के आदान-प्रदान एवं उसकी वृद्धि की व्यवस्था के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

संस्कृत मन्दाकिनी के द्वितीय भाग में, इस प्रकार की विषयवस्तु प्रकाशित की जा रही है जिससे विद्यार्थी प्राचीन भारत की कुछ झाँकी देख सकें और संस्कृत के ज्ञान-भण्डार का कुछ आभास पा सकें। इससे भारतीय छात्रों को अस्मिताबोध भी होगा।

इस द्वितीय भाग में, ग्यारह पाठ हैं। विद्यार्थियों की सुविधा के लिए प्रत्येक पाठ के आरम्भ में उससे सम्बद्ध जानकारी दे दी गई है जिससे पाठ की विषयवस्तु के प्रति उत्सुकता जाग्रत हो सके। पाठ के अन्त में विशिष्ट शब्दों के अर्थ भी दिये गए हैं। तत्पश्चात् "अभ्यासः" शीर्षक देकर पठितविषय का आलोडन करने की प्रेरणा दी गई है जिससे विविध प्रश्न एवं विविध उत्तरों के माध्यम से विषयवस्तु हृदयङ्गम हो सके। इन सब का प्रयोजन यही है कि कक्षा में अध्यापक एवं विद्यार्थियों के पारस्परिक बौद्धिक विचार-विनिमय से, संस्कृत भाषा एवं उसमें निहित ज्ञान बिन्दुओं के प्रति उनकी अभिरुचि उत्तरोत्तर बढ़ती रहे।

जिन विद्वानों एवं विशेषज्ञों ने, परिषद् द्वारा आयोजित कार्यगोष्ठियों में भाग लेकर अपना सहयोग एवं मार्गदर्शन किया है, संपादक उन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। परिषद् के संकलन को अधिकाधिक उपयोगी बनाने हेतु प्राप्त सुझाव हमारे लिए सदैव स्वागत योग्य हैं।

पाण्डुलिपि-समीक्षा-संशोधन कार्यगोष्ठी के सदस्य

1. डॉ. विद्या निवास मिश्र
पूर्व कुलपति, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश
2. डॉ. आद्याप्रसाद मिश्र
पूर्व कुलपति,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश
3. प्रो. उमा शंकर शुक्ल
अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी, उत्तर प्रदेश
4. प्रो. कैलाशपति त्रिपाठी
अवकाशप्राप्त अध्यक्ष, साहित्य विभाग
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी, उत्तर प्रदेश
5. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद दूबे
अध्यक्ष, ज्योतिर्विज्ञान विभाग
राँची विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड
6. श्री वासुदेव शास्त्री
अवकाशप्राप्त प्रभारी, संस्कृत
रा.शै.अनु.प्र. संस्थान, उदयपुर
7. डॉ. गणेशदत्त शर्मा
पूर्व प्राचार्य,
लाजपतराय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय साहिबाबाद, उत्तर प्रदेश
8. डॉ. पुनीता शर्मा
रीडर, संस्कृत
श्री वैंकटेश्वर महाविद्यालय
नई दिल्ली
9. डॉ. हरि गोपाल शास्त्री
प्राचार्य, गुरुकुल महाविद्यालय
ज्वालापुर, हरिद्वार
उत्तरांचल
10. श्री परमानन्द झा
पी.जी.टी., संस्कृत, रा.उ.मा.बाल विद्यालय, आदर्श नगर, दिल्ली
11. प्रो. चन्द्रहास शर्मा
पूर्व विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग
ला.ब.शा.रा.सं. विद्यापीठ, नई दिल्ली
12. डॉ. पुरुषोत्तम मिश्र
टी.जी.टी. संस्कृत,
रा.व.मा.बा.वि., जहाँगीर पुरी, दिल्ली
13. श्री छविकृष्ण शास्त्री
पी.जी.टी. केन्द्रीय विद्यालय
टैगोर गार्डन, नई दिल्ली
14. डॉ. पद्म प्रसाद सुवेदी
प्राचार्य, गरीबदासीय संस्कृत
महाविद्यालय, हरिद्वार, उत्तरांचल
15. डॉ. रविदत्त पाण्डेय
अवकाशप्राप्त पी.जी.टी., संस्कृत
रा.उ.मा.बा.विद्यालय,
मानसरोवर पार्क, दिल्ली
16. श्रीमती सन्तोष कोहली
अवकाशप्राप्त उपप्रधानाचार्य
स.क.वि., कैलाश एन्कलेव
रोहिणी, दिल्ली

एन.सी.ई.आर.टी. संकाय

सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग

17. डॉ. कमलाकान्त मिश्र
प्रोफेसर, संस्कृत (संयोजक)
18. श्रीमती उर्मिल खुंगर
सेलेक्शन ग्रेड लेक्चरर, संस्कृत
19. डॉ. कृष्णचन्द्र त्रिपाठी
रीडर, संस्कृत
20. डॉ. दया शंकर तिवारी
प्रोजेक्ट फेलो, संस्कृत

विषय-सूची

भारत का संविधान

भाग 4क

नागरिकों के मूल कर्त्तव्य

अनुच्छेद 51क

मूल कर्त्तव्य – भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह –

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे,

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे,

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण बनाए रखे,

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे,

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभावों से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध हों,

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे,

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव रखे,

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे,

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे, और

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत् प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू सके।

वन्दना

मधुमन्मे निष्क्रमणं मधुमन्मे परायणम्।
वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसंदृशः।।1।।
(अथर्ववेद 1/34/3)

अर्थ– हे प्रभो! मेरा जाना मधुरता से युक्त हो। मेरा आना भी मधुरता से युक्त हो। मैं मधुर वाणी बोलूँ और मैं मधुर दर्शनवाला बन जाऊँ।

स्वस्ति मात्र उत पित्रे नो अस्तु
स्वस्ति गोभ्यो जगते पुरुषेभ्यः।
विश्वं सुभूतं सुविदत्रं नो अस्तु
ज्योगेव दृशेम सूर्यम्।।2।। (अथर्ववेद 1/31/4)

अर्थ– हे प्रभो! हमारे माता-पिता का कल्याण हो। हमारी गौओं का, सम्पूर्ण संसार का और सभी मनुष्यों का कल्याण हो। समस्त विश्व सुदृढ़ एवं शुभ ज्ञान से युक्त हो तथा हम चिरन्तन काल तक सूर्य के दर्शन करते रहें।

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि
तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि।।3।। (शुक्लयजुर्वेद 1/5)

अर्थ–हे व्रतपते! (व्रत के रक्षक) अग्नि देवता। मैं सत्यव्रत का आचरण करूँगा। आपकी कृपा से मैं इस व्रत पालन में समर्थ हो सकूँ। मेरा यह व्रत सिद्ध हो। मैं असत्य को त्याग कर सत्य की शरण में आ रहा हूँ।

वात आ वातु भेषजं
शंभु मयो भु नो हृदे।
प्र ण आयूंषि तारिषत् ।।4।। (ऋग्वेद 10/186/1)

अर्थ–हे वायुदेव! आप हमारे लिये औषधियुक्त (रोगनिवारक) तथा हमारे हृदय के लिए सुखदायक वायु को प्रवाहित कीजिये और हमारी आयु को बढ़ाइये।

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु
शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु
शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ।।5।। (ऋग्वेद 7/35/8)

अर्थ–हे प्रभो! विराट दृष्टि वाला सूर्य हमारे लिए सुख-शान्ति हेतु उदित हो। चारों - दिशायें हमारे लिए सुख-शान्तिदायिनी हों। अटल पर्वत हमारे लिए सुख-शान्तिदायक हों। नदियाँ तथा समस्त जल हम सब के लिए सुखप्रद हों।

प्रथमः पाठः

दैवी सम्पत्

प्रस्तुत पाठ श्रीमद्भगवद्गीता से संकलित है। गीता के 16,17 एवं 18वें अध्याय से जिन श्लोकों का चयन इस पाठ के लिए किया गया है उनमें भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते समय अहिंसा, सत्य, दान तथा यज्ञ आदि उन गुणों का वर्णन किया है जो मानव में दिव्यता का आधान कर देते हैं। ऐसे ही गुणों को **दैवी सम्पत्** कहा गया है। इसी प्रकार शारीरिक, वाचिक एवं मानसिक तप तथा सात्विक दान का निर्देश भी योगेश्वर श्री कृष्ण ने अत्यन्त सुन्दर ढंग से किया है, जो कि सभी के लिए अनुकरणीय है। पाठ के अन्तिम श्लोकों में **ओं तत्सत्** ऐसा कहकर ब्रह्म का ध्यान करने तथा यश, दान व तप आदि श्रेष्ठ कार्यों का कभी त्याग न करने का भी निर्देश किया गया है जो कि सभी के लिए प्रेरणादायक है।

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्।।1।।

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्।।2।।

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत।।3।।

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते।।4।।

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते।।5।।

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते।।6।।

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः।
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते।।7।।

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम्।।8।।

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः,
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा।।9।।

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपः क्रियाः।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम्।।10।।

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।।11।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

सत्त्वसंशुद्धिः	:	जीवात्मा की पवित्रता।
आर्जवम्	:	सरलता।
अपैशुनम्	:	चुगली न करना।
अलोलुप्त्वं	:	लालची न होना।
मार्दवं	:	कोमलता।
अनुद्वेगकरं	:	दूसरों को क्रोध न दिलाने वाला।

वाङ्मयं	:	वाणी का।
आत्मविनिग्रहः	:	अपने आप पर नियन्त्रण रखना।
सात्त्विकम्	:	सतोगुण से युक्त।
परिचक्षते	:	कहा जाता है।
अनुपकारिणे	:	उपकार न करने वाले के लिए।
उदाहृत्य	:	उच्चारण करके।
प्रवर्तन्ते	:	कार्यारम्भ करते हैं।
त्याज्यम्	:	छोड़ने योग्य।
पावनानि	:	पवित्र करने वाले।
मनीषिणाम्	:	बुद्धिमान् पुरुषों के।

अभ्यासः

1. **संस्कृतेन उत्तरं देयम्**

   (क) श्रीमद्भगवद्गीता इत्यस्य कोऽर्थः ?
   (ख) दैवी सम्पत् का भवति ?
   (ग) मनीषिणां पावनानि कर्माणि कानि सन्ति ?
   (घ) शारीरं तपः किमुच्यते ?
   (ङ) सात्त्विकतपसः किं लक्षणम् ?

2. **रिक्तस्य स्थानस्य पूर्तिः क्रियताम्**

   (क) श्रीकृष्णः ____________ ।
   (ख) गीतोपदेशाः ____________ ग्रन्थाद् उद्धृताः सन्ति।
   (ग) ____________ वाङ्मयं तप उच्यते।
   (घ) ____________ न त्याज्यम् ____________ ।

3. अधोलिखितानां भावार्थः स्पष्टीक्रियताम्

(क) सत्त्वसंशुद्धिः
(ख) स्वाध्यायः
(ग) अलोलुप्त्वम्
(घ) ब्रह्मचर्यम्
(ङ) स्वाध्यायाभ्यसनम्
(च) मनः प्रसादः
(छ) ब्रह्मवादिनः

4. प्रत्येकं शब्दस्य सम्मुखे, तस्य विपरीतार्थकः शब्दो लिख्यताम्

(क) आर्जवम् ________
(ख) तपः ________
(ग) शारीरम् ________
(घ) सात्त्विकम् ________
(ङ) प्रसादः ________

5. अधोलिखितशब्देषु सन्धिविच्छेदः क्रियताम्

(क) स्वाध्यायः
(ख) भूतेष्वलोलुप्त्वम्
(ग) नातिमानिता
(घ) यद्दानम्
(ङ) दीयतेऽनुपकारिणे
(च) तद्दानम्

द्वितीयः पाठः

रामस्य लोकाराधनम्

प्रस्तुत पाठ भवभूति के सर्वश्रेष्ठ नाटक उत्तररामचरित से संकलित है। इसमें रामचन्द्र जी के उत्तर चरित्र का वर्णन है। गुरुजनों के विरह से खिन्न सीतादेवी को सान्त्वना देने के लिए रामचन्द्र जी धर्मासन से उठकर वासगृह में जाते हैं। तदनन्तर वासगृह में रामचन्द्र और सीतादेवी के मध्य ही कञ्चुकी अष्टावक्र के आगमन की सूचना देता है। अष्टावक्र राम-सीता के कुशल क्षेम के उपरान्त भगवान् वसिष्ठ का सीता जी को दिया गया आशीर्वाद (केवलं वीरप्रसवा भूयाः – केवल वीरप्रसविनी हो) सुनाते हैं। साथ ही भगवती अरुन्धती, कौशल्या आदि रानियों तथा शान्ता का सन्देश भी भगवान् राम से कहते हैं। वस्तुतः इस पाठ के समस्त विषयवस्तु की परिणति राम के उन वचनों में होती है जिनमें वे कहते हैं कि जिन लोगों को समाज में उत्तरदायी पद प्राप्त हैं वे पूर्ण स्वतन्त्र हो ही कैसे सकते हैं? मर्यादा पुरुषोत्तम राम अष्टावक्र से कहते हैं कि स्नेह, दया और अपना सुख ही क्या, लोक की आराधना के लिए मुझे यदि जानकी का भी त्याग करना पड़े तो मुझे वह भी करना होगा। यह आदर्श की पराकाष्ठा है।

(ततः प्रविशत्युपविष्टो रामः सीता च)

रामः : **देवि! वैदेहि! विश्वसिहि, ते हि गुरवो न शक्नुवन्ति विहातुमस्मान्।**

किन्त्वनुष्ठाननित्यत्वं स्वातन्त्र्यमपकर्षति।
सङ्कटा ह्याहिताग्नीनां प्रत्यवायैर्गृहस्थता।।

सीता : जानामि आर्यपुत्र! जानामि, किन्तु सन्तापकारिणो बन्धुजनविप्रयोगा भवन्ति।

रामः : एवमेतत्। एते हि हृदयमर्मच्छिदः संसारभावाः। येभ्यो बीभत्समानाः सन्त्यज्य सर्वान्कामानरण्ये विश्राम्यन्ति मनीषिणः।

(प्रविश्य)

कञ्चुकी : रामभद्र! (इत्यर्धोक्ते साशङ्कम्) महाराज!

रामः : (सस्मितम्) आर्य! ननु रामभद्र! इत्येव मां प्रत्युपचारः शोभते तातपरिजनस्य, तद्यथाभ्यस्त–मभिधीयताम्।

कञ्चुकी : देव! ऋष्यशृङ्गाश्रमादष्टावक्रः सम्प्राप्तः।

सीता : आर्य! ततः किं विलम्ब्यते।

रामः : त्वरितं प्रवेशय।

(कञ्चुकी निष्क्रान्तः। प्रविश्य)

अष्टावक्रः : स्वस्ति वाम्।

रामः : भगवन्! अभिवादये, इत आस्यताम्।

सीता : भगवन्, नमस्ते। अपि कुशलं सजामातृकस्य गुरुजनस्यार्यायाः शान्तायाश्च?

रामः : निर्विघ्नः सोमपीथी भावुको मे भगवानृष्यशृङ्गः आर्या च शान्ता?

सीता : अस्मानपि स्मरति?

अष्टावक्रः : (उपविश्य) अथ किम्! देवि, कुलगुरुर्भगवान् वसिष्ठस्त्वामिदमाह–

विश्वंभरा भगवती भवतीमसूत,
राजा प्रजापतिसमो जनकः पिता ते।
तेषां वधूस्त्वमसि नन्दिनि! पार्थिवानां
येषां कुलेषु सविता च गुरुर्वयं च।।
तत्किमन्यदाशास्महे। केवलं वीरप्रसवा भूयाः।

रामः : अनुगृहीताः स्मः।
लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।
ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति।।

अष्टावक्रः : इदं च भगवत्याऽरुन्धत्या देवीभिः शान्तया च भूयो भूयः सन्दिष्टम् – "यः कश्चिद्गर्भदोहदो भवत्यस्याः, सोऽवश्यमचिरान्मानयितव्य" इति।

रामः : क्रियते यद्येषा कथयति।

अष्टावक्रः : ननान्दुः पत्या च देव्याः सन्दिष्टम्– "वत्से, कठोरगर्भेति नानीतासि। वत्सोऽपि रामभद्रस्त्वद्विनोदार्थमेव स्थापितः। तत्पुत्रपूर्णोत्सङ्गमायुष्मतीं द्रक्ष्याम", इति।

रामः : (सहर्षलज्जास्मितम्) तथास्तु! भगवता वसिष्ठेन न किञ्चिदादिष्टोऽस्मि?

अष्टावक्रः : श्रूयताम्
जामातृयज्ञेन वयं निरुद्धा-
स्त्वं बाल एवासि नवं च राज्यम्।
युक्तःप्रजानामनुरञ्जने स्या-
स्तस्माद्यशो यत्परमं धनं वः।।

रामः : यथा समादिशति भगवान्मैत्रावरुणिः।
स्नेहं, दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

अपकर्षति	:	विघ्न उत्पन्न करता है।
आहिताग्नीनाम्	:	अग्निहोत्र व्रत स्वीकार करने वालों की।
प्रत्यवायैः	:	अनेक प्रकार के विघ्नों से।
स्वस्ति वाम्	:	आप दोनों का कल्याण हो।
सोमपीथी	:	सोमरस का पान करने वाले।
बीभत्समानः	:	घृणा करते हुए।
विश्वम्भरा	:	पृथ्वी देवी।
प्रजापतिसमः	:	ब्रह्मा के समान (जनक की तुलना ब्रह्मा से की गई है)।
ऋषिः	:	मुनि, (मन्त्रद्रष्टा को 'ऋषि' कहते हैं)।
दोहदः	:	गर्भकाल में गर्भवती स्त्री की किसी भी इच्छा को 'दोहद' कहते हैं।
वः	:	तुम्हारा।
युक्ताः	:	लगे रहो।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं देयम्

(क) अयं पाठः कस्माद् ग्रन्थात् सङ्कलितः?

(ख) रामः कः आसीत्?

(ग) अष्टावक्रेण किं सूचितम्?

(घ) रामस्य लोकाराधनं प्रति का अवधारणा आसीत्?

(ङ) प्रवेशानन्तरं अष्टावक्रेण किं भणितम्?

(च) अस्मिन् पाठे कानि कानि आदर्शवाक्यानि वर्तन्ते?

(छ) वसिष्ठः अष्टावक्रेण कं सन्देशं प्रेषितवान्?

(ज) पाठेऽस्मिन् 'सोमपीथी' शब्दस्य कोऽभिप्रायः?

2. **रिक्तस्थानपूर्तिः क्रियताम्**

(क) संकटा ह्याहिताग्नीनां प्रत्यवायै ______________ ।

(ख) स्वस्ति ______________ ।

(ग) ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनु ______________ ।

(घ) ______________ रामस्य व्रतम् आसीत्।

(ङ) ______________ मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा।

3. **अधोलिखितयोः गद्यपद्यांशयोः भावार्थो लिख्यताम्**

(क) **कञ्चुकी** – रामभद्र ! (इत्यर्धोक्ते साशंकम्) महाराज!
रामः – (सस्मितम्) आर्य! ननु रामभद्र! इत्येव मां प्रत्युपचारः शोभते तातपरिजनस्य, तद्यथाभ्यस्तमभिधीयताम्।

(ख) लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।
ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति।।

4. **निम्नलिखितानां भावः स्पष्टीक्रियताम्**

(क) अनुष्ठाननित्यत्वम्

(ख) रामभद्र! (इत्यर्धोक्ते साशङ्कम्)

(ग) गर्भदोहदः

5. **सन्धिविच्छेदः क्रियताम्**

(क) कुलगुरुर्भगवान्

(ख) आदिष्टोऽस्मि

(ग) नास्ति

(घ) गर्भेति

तृतीयः पाठः

भारतीय-खगोलविज्ञानम्

प्रस्तुत संग्रह, भारतीय खगोलविद् भास्कराचार्य के सिद्धान्तशिरोमणि ग्रन्थ के गोलाध्याय से संगृहीत है। इस संग्रह के प्रथम श्लोक में ब्रह्माण्ड का प्रमाण योजन माप (15 कि.मी.) में दिया गया है। द्वितीय पद्य में पृथ्वी के ऊपर क्रमशः चलने वाली सात वायुओं का उल्लेख है। तृतीय पद्य में पृथ्वी के आकर्षण की सीमा तथा प्रवहवायु की गति पश्चिमाभिमुख बतायी गयी है, जो समस्त ब्रह्माण्ड को घुमा रही है। चौथे, श्लोक में ग्रहों की कक्षा का क्रम वर्णित है तथा उन ग्रहों में पञ्चमहाभूतों के अस्तित्व का भी निर्देश है। ग्रह, आकाश में अपनी आकर्षण शक्ति से अवस्थित हैं – इसका वर्णन पाँचवें पद्य में है। छठे में, चन्द्रमा सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित है, इस सिद्धान्त का प्रतिपादन है। चन्द्रबिम्ब में प्रकाश घटता-बढ़ता है, इसका प्रतिपादन सातवें पद्य में किया गया है। आठवें में भास्कराचार्य ने न्यूटन से लगभग सात सौ वर्ष पूर्व जिस आकर्षण सिद्धान्त का प्रतिपादन कर दिया था उसका वर्णन है।

कोटिघ्नैर्नख-नन्द-षट्क-नख-भू-भूभृद्भुजङ्गेन्दुभिः।
ज्योतिःशास्त्रविदो वदन्ति नभसः कक्षामिमां योजनैः॥1॥

भूवायुरावह इह प्रवहस्तदूर्ध्वः,
स्यादुद्वहस्तदनु संवहसंज्ञकश्च।
अन्यस्ततोऽपि सुवहः परिपूर्वकोऽस्माद्,
बाह्यः परावह इमे पवनाः प्रसिद्धाः॥2॥

भूमेर्बहिर्द्वादशयोजनानि,
भूवायुरत्राम्बुद - विद्युदाद्यम्।
तदूर्ध्वगो यः प्रवहः स नित्यम्,
प्रत्यग्गतिस्तस्य तु मध्यसंस्था।।3।।

भूमेर्पिण्डः शशाङ्क - ज्ञ - कवि-
रवि - कुजेज्यार्कि - नक्षत्रकक्षा।
वृत्तैर्वृतः सन् मृदनिल - सलिल-
व्योम - तेजोमयोऽयम्।।4।।

नान्याधारः स्वशक्त्यै वियति,
नियतं तिष्ठतीहास्य पृष्ठे।।
निष्ठं विश्वं च शश्वत्,
सदनुज - मनुजादित्यदैत्यं समन्तात्।।5।।

तरणि - किरणसङ्गादेष पीयूषपिण्डो–
दिनकर - दिशि चन्द्रश्चन्द्रिकाभिश्चकास्ति।।
तदितरदिशि बाला - कुन्तल - श्यामलश्रीः,
घट इव निजमूर्त्तिच्छाययैवातपस्थः।।6।।

सूर्यादधःस्थस्य विधोरधःस्थ -
मर्धं नृदृश्यं सकलासितं स्यात्।
दर्शेऽथ मार्धान्तरितस्य शुक्लं,
तत् पौर्णमास्यां परिवर्तनेन।।7।।

आकृष्टिशक्तिश्च मही तया यत्,
खस्थं गुरु स्वाभिमुखं स्वशक्त्या।
आकृष्यते तत्पततीव भाति,
समे समन्तात् क्व पतत्वियं खे।।8।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

कोटिघ्नैर्नखनन्दषट्क-नखभूभूभृद्भुजङ्गेन्दुभिः	:	कोटि–एक करोड़, घ्नै–गुणा किया गया, नख = 20, नन्द = 9, षट्क = 6, नख = 20, भू = 1, भूभृद = 7, भुजङ्ग = 8, इन्दु = 1 'अङ्कानां वामतो गतिः' के अनुसार यह संख्या बनी – 18712069200000000
नभसः	:	ब्रह्माण्डस्य (ब्रह्माण्ड की)।
कक्षा	:	परिधि।
योजनैः	:	योजनों के द्वारा (परिधि नापने में परिमाण का एक प्रकार)।
भूवायुः	:	भूमिसम्बन्धात् भूवायुः, जो भूपरिधि के साथ क्रियाशील है।
आवह	:	वायोश्चलत्वात् भूवायुः आवह इत्यभिधीयते, भूवायुगोल का नाम आवह है। यह वायु पृथ्वी के सभी पूर्वापरादि दसों दिशाओं में गतिशील है।
प्रवह	:	आवहवायोरुर्ध्वं स्थितिर्यस्येति तद् प्रवहः। भूवायु गोल के ऊपर , दूसरे प्रवह नामक गोल में प्रवह वायु चलता है।
उद्वह	:	प्रवहादनु पश्चादूर्ध्वम् उद्वहः। प्रवह वायु गोल के ऊपर उद्वह संज्ञक वायु गोल है।
संवह	:	पञ्चमो वायुगोलः संवहः। उद्वह वायु गोल के ऊपर रहने वाली वायु संवह है।
सुवह	:	संवह के ऊपर 'सुवह' वायु संज्ञक गोल है।

परिवहः	:	परिशब्दः पूर्वं यस्येति परिपूर्वको वह शब्देन षष्ठो वायुगोलः परिवहः। सुवह-संज्ञक वायुगोल के ऊपर परिवह नामक वायु गोल है।
परावहः	:	सप्तमो अन्तिमो वा वायुगोलः परावहः। परिवह संज्ञक वायुगोल के ऊपर परावह वायु है। इसके ऊपर समीपग चन्द्रबिम्ब में वायु का अभाव है।
अम्बुदः	:	मेघः, सजल मेघ।
विद्युदाद्यम्	:	विद्युत्प्रसिद्धा, आद्यशब्दादिन्द्रधनु-गान्धर्वनगरादीनि।
प्रत्यग्गतिः	:	पश्चिमाभिमुखी गति।
मध्यसंस्था	:	मध्यमा स्थितिः (प्रवह वायु की एकरूपा, स्थिरात्मिका, मध्यमा गति)।
भूमेर्पिण्डः	:	पृथिव्याः स्वांशानाम् दार्ढ्येनैकीभावः, भूमिस्वरूप।
ज्ञ	:	बुध।
कवि	:	शुक्र।
कुज	:	मङ्गल।
ईज्य	:	बृहस्पति।
आर्कि	:	शनि।
वृत्तैर्वृतः	:	चन्द्रबुधादीनां कक्षा वृत्तपदवाच्या, तैः आवृताः, उन चन्द्र बुधादि की कक्षाओं से युक्त अथवा आवृत्त।
मृद्	:	मिट्टी।
अनिल	:	वायु।
सलिल	:	जल।
व्योम	:	आकाश।

तेजोमय	:	अग्निमय।
वियति	:	आकाशे, आकाश में।
निष्ठम्	:	स्थितम्, स्थित है।
दनुज	:	दानव।
मनुज	:	मनुष्य।
आदित्य	:	देवता।
दैत्यम्	:	दितिपुत्र, दैत्य।
तरणिकिरणसङ्गात्	:	सूर्यकिरणप्रतिफलनात्, सूर्य की किरणों के सम्पर्क से।
पीयूषपिण्डः	:	अमृतमयपिण्डः, अमृतमय चन्द्रबिम्ब।
तदितरदिशि	:	सूर्य की विपरीत दिशा में।
बाला	:	रमणी (प्रस्तुत पाठ के प्रसङ्ग में)।
कुन्तल	:	बाल।
आतपरथ	:	सूर्यकिरणसम्बद्धसूत्रप्रदेशे स्थापितः, सूर्याभिमुखः (सूर्य की धूप में स्थित हुआ)।
विधोः	:	चन्द्रगोलस्य, चन्द्रमा के।
नृदृश्यम्	:	भूस्थजनदृग्योग्ये, नरदृष्टि से।
असितम्	:	न सितम्, कृष्ण या काला।
दर्शे	:	अमान्ते, अमान्त काल में।
आर्धान्तरितस्य	:	सूर्यषड्राश्यन्तरितचन्द्रगोलस्य, सूर्य की छह राशियों से अन्तरित चन्द्रगोल के।
आकृष्टिशक्तिः	:	आकर्षणं तत्सम्पादिका शक्तिः। (पृथ्वी में) गुरुत्वाकर्षण की शक्ति।
खस्थम्	:	आकाशस्थम्, आकाश में स्थित।
स्वशक्त्या	:	आकर्षणशक्त्या, आकर्षणशक्ति के द्वारा।
खे	:	आकाशे, आकाश में।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत**

   (क) ब्रह्माण्डस्य कक्षा का वर्तते ?

   (ख) के प्रसिद्धाः सप्तपवनाः ?

   (ग) सुवहः वायुः कुत्र वर्तते ?

   (घ) वियति भुवनस्य कः आधारः ?

   (ङ) दर्शे किं भवति ?

   (च) आकृष्टिशक्तिः का भवति ?

2. **स्पष्टीक्रियताम्**

   मध्यसंस्था, नक्षत्रकक्षा, प्रत्यग्गतिः, पौर्णमासी

3. **रिक्तस्थानपूर्तिः करणीया**

   (क) बुधस्य संज्ञा ______________ भवति। (ज्ञ, ईज्य, पृथ्वीसुतः)

   (ख) कुजः ______________ भवति। (शनैश्चरः, रविः, मङ्गलः)

   (ग) अर्कि ______________ अभिधानम्। (शनेः, भौमस्य, सूर्यस्य)

   (घ) दैत्याः ______________। (दनुजपुत्राः, दितिपुत्राः, मनुजपुत्राः)

4. पीयूषपिण्डः किं भवति ?

5. पञ्चभूताः के सन्ति ?

6. शृङ्गोन्नतिवासनया किं क्रियते ?

7. अधोलिखितग्रहाणां कक्षाक्रमं स्पष्टीकुरुत

   रविः, चन्द्रः, भौमः, बुधः, बृहस्पतिः, शुक्रः, शनिः

चतुर्थः पाठः

रघूणामन्वयः

महाकवि कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य की रचना की थी जिसमें राजा रघु के वंश का विस्तृत वर्णन है। अन्वय का अर्थ कुल अथवा वंश है। प्रस्तुत पाठ में महाकाव्य के प्रथम सर्ग से चुने श्लोकों में रघु के वंश का वर्णन काव्यात्मक पद्धति से किया गया है। शब्द और अर्थ के समान मिले हुए शिव-शक्ति का नमन करते हुए, महाकवि कालिदास रघुवंश की महत्ता तथा स्वयं की अल्पज्ञता में महान् अन्तर मानते हुए, स्वयं को रघुवंश वर्णन करने योग्य नहीं मानते और छोटी नौका से सागर पार करने की इच्छा करने वाले नाविक की गति जैसी अपनी गति समझते हैं। फिर भी पूर्व विद्वानों द्वारा सूचित मार्ग पर चलना कवि को सरल दिखता है। रघु का वंश शुद्ध, पराक्रमी, समुद्रतट पर्यन्त शासन करने वाला, विधिवत् हवन, दान, दण्ड आदि की व्यवस्था करने वाला, त्याग के लिये संचय, सत्य के लिये मितभाषी, कीर्ति के लिए जीतने की इच्छा करने वाला, वंशवृद्धि के लिए गृहस्थ धर्म, चारों आश्रमों का विधिवत् पालन करने वाला है, ऐसे वंश की कीर्ति से प्रेरित होकर कालिदास रघु के वंश का वर्णन करते हैं। सूर्य के द्वारा जल शोषण एवं रघु के द्वारा कर ग्रहण प्रजापालन के लिए ही होता था। राजा दिलीप यज्ञ द्वारा स्वर्ग का पोषण तथा इन्द्र वृष्टि द्वारा मर्त्यलोक का पोषण करते थे। इस प्रकार प्रस्तुत पद्यों में रघुकुल के उदात्त गुणों का वर्णन किया गया है।

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।1।।

क्व? सूर्यप्रभवो वंशः क्व? चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।2।।

अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन् पूर्वसूरिभिः।
मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः।।3।।

सोऽहमाजन्मशुद्धानामाफलोदयकर्मणाम्।
आसमुद्रक्षितीशानामानाकरथवर्त्मनाम्।। 4।।

यथाविधिहुताग्नीनां यथाकामार्चितार्थिनाम्।
यथापराधदण्डानां यथाकालप्रबोधिनाम्।।5।।

त्यागाय सम्भृतार्थानां सत्याय मितभाषिणाम्।
यशसे विजिगीषूणां प्रजायै गृहमेधिनाम्।।6।।

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्।
वार्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम्।।7।।

रघूणामन्वयं वक्ष्ये तनुवाग्विभवोऽपि सन्।
तद्गुणैः कर्णमागत्य चापलाय प्रचोदितः।।8।।

प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत्।
सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः।।9।।

दुदोह गां स यज्ञाय सस्याय मघवा दिवम्।
सम्पद्विनिमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयम्।।10।।

तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः।
हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकाऽपिवा।।11।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

वागर्थौ	:	वाक् च अर्थश्च वागर्थौ, वागर्थौ इव वागर्थाविव, शब्द और अर्थ के समान।
सम्पृक्तौ	:	मिले हुए।
पितरौ	:	माता च पिता च पितरौ (एकशेषः), माता-पिता।
सूर्यप्रभवः	:	प्रभवति अस्मात् इति प्रभवः, सूर्यः प्रभवः यस्य सः सूर्यप्रभवः, सूर्य कुल में उत्पन्न।
तितीर्षुः	:	तरितुम् इच्छति इति तितीर्षति, तितीर्षति इति (तितीर्ष+उ) तितीर्षुः, तैरने की इच्छा करने वाला।
उडुपेन	:	नौका से।
पूर्वसूरिभिः	:	पूर्वे च ते सूरयः पूर्वसूरयः तैः पूर्वसूरिभिः, पूर्व विद्वानों के द्वारा।
मणौ	:	मणि में।
वज्रसमुत्कीर्णे	:	वज्रेण समुत्कीर्णः वज्रसमुत्कीर्णः तस्मिन् वज्रसमुत्कीर्णे, वज्र द्वारा छेद किए गये।
आजन्मशुद्धानाम्	:	जन्मनः आ इति आजन्म, आजन्म शुद्धाः इति आजन्मशुद्धाः, तेषाम् आजन्मशुद्धानाम्, जन्म से पवित्र।
आनाकरथवर्त्मनाम्	:	न विद्यते अकं यत्र स, नाकः नाकम् अभिव्याप्य इति आनाकम्, आनाकं रथवर्त्म येषां ते आनाकरथवर्त्मानः तेषाम् आनाकरथवर्त्मनाम्, स्वर्ग पर्यन्त रथ ले जाने वाले।
मितभाषिणाम्	:	कम बोलने वाले।

विजिगीषूणाम्	:	विजेतुम् इच्छन्ति इति विजिगीषवः तेषां विजिगीषूणाम्, जीतने की इच्छा करने वाले।
शैशवे	:	शिशोः भावः शैशवम् तस्मिन् शैशवे, बाल्यकाल में।
यौवने	:	युवावस्था में।
वार्धके	:	वृद्धावस्था में।
तनुत्यजाम्	:	तनुं त्यजन्ति इति तनुत्यजः तेषां तनुत्यजाम्, शरीर त्याग करने वाले।
अन्वयं	:	वंश को।
वाग्विभवः	:	वाचां विभवः वाग्विभवः, तनुः वाग्विभवः यस्य सः तनुवाग्विभवः, वाणीरूपी धन।
प्रचोदितः	:	प्रेरित किया।
प्रजानाम्	:	प्रजाओं का।
भूत्यर्थं	:	भूत्यै इदं भूत्यर्थम्, कल्याण के लिए।
बलिम्	:	कर (टैक्स)।
उत्स्रष्टुम्	:	देने के लिये।
दुदोह	:	दुह्-प्रपूरणे लिट्, प्रथम पुरुष, एकवचन, दोहन किया।
भुवनद्वयम्	:	भुवनयोः द्वयम्, दो लोक (पृथिवी और स्वर्ग)।
हेम्नः	:	षष्ठी एकवचन, सोने का।
अग्नौ	:	सप्तमी एकवचन, अग्नि में।

सन्धिविच्छेदः

वागर्थाविव	=	वागर्थौ + इव
उडुपेनास्मि	=	उडुपेन + अस्मि
वंशेऽस्मिन्	=	वंशे + अस्मिन्

सोऽहम्	=	सः + अहम्
यथापराध	=	यथा + अपराध
तद्गुणैः	=	तत् + गुणैः
सदसत्	=	सत् + असत्

अभ्यासः

1. **संस्कृतेन उत्तरं देयम्**
   - (क) अयं पाठः कस्माद् ग्रन्थात् उद्धृतः?
   - (ख) रघुवंशमहाकाव्यस्य रचयिता कः अस्ति?
   - (ग) कालिदासः कीदृशं सागरं (तितीर्षुः अस्ति)? तरीतुम् इच्छति?
   - (घ) वज्रसमुत्कीर्णे मणौ सूत्रस्य इव गतिः कस्य अस्ति?
   - (ङ) राज्ञः दिलीपस्य रथः कुत्र गच्छति स्म?
   - (च) राजा दिलीपः शैशवे कस्य अभ्यासं करोति?
   - (छ) दिलीपः गां किमर्थं दुदोह?
   - (ज) हेम्नः श्यामिका कुत्र दृश्यते?
   - (झ) अन्ते योगेन किं त्यजन्ति?

2. **रिक्तस्थानपूर्तिः क्रियताम्**
   - (क) जगतः पितरौ ________ परमेश्वरौ।
   - (ख) मणौ ________ मे गतिः।
   - (ग) शैशवे ________ तनुत्यजाम्।
   - (घ) त्यागाय ________ मितभाषिणाम्।
   - (ङ) दुदोह गां ________ भुवनद्वयम्।

3. **सप्रसङ्ग व्याख्यायेताम्**
   - (क) तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।
   - (ख) तद्गुणैः कर्णमागत्य चापलाय प्रचोदितः।

4. द्वितीय-दशमश्लोकयोः स्वमातृभाषया अनुवादः क्रियताम्।

5. अधोलिखितपदानाम् उचितम् अर्थं कोष्ठकात् चित्वा लिखत।

(सन्तान के लिए), (पृथिवी को), (माता-पिता को), (कहूँगा), (सुनने के लिए), (समुद्र को), (विधिपूर्वक), (इन्द्र), (पूर्व विद्वानों के द्वारा)

(क) पितरौ – ______________

(ख) सागरम् – ______________

(ग) पूर्वसूरिभिः – ______________

(घ) यथाविधि – ______________

(ङ) प्रजायै – ______________

(च) वक्ष्ये – ______________

(छ) गाम् – ______________

(ज) मघवा – ______________

(झ) श्रोतुम् – ______________

6. विपरीतार्थमेलनं क्रियताम्

मोहात्	नरकम्
मे	असत्याय
सत्याय	ते
दिवम्	अज्ञानात्

7. सन्धिविच्छेदः क्रियताम्

यथा– चाल्पविषया = च + अल्पविषया

उडुपेनास्मि =

इवास्ति =

श्यामिकाऽपि =

अत्रागच्छ =

पञ्चमः पाठः

सिंह-शृगालपुत्रयोः कथा

पञ्चतन्त्र संस्कृत साहित्य का अद्भुत ग्रन्थ है। इसमें पं. विष्णुशर्मा ने मित्रलाभ, सुहृद्भेद, लब्धप्रणाश, अपरीक्षितकारक और काकोलूकीय इन पाँच तन्त्रों (भागों) के अन्तर्गत छोटी-छोटी कथाओं के द्वारा नीतिगत बातें बतायी हैं। एक राजा के कुमार्गगामी राजकुमारों को सन्मार्ग पर लाने के लिए पञ्चतन्त्र की रचना की गई थी। प्रस्तुत पाठ में एक शेर अपने दो बच्चों और शेरनी के आहारार्थ शिकार के लिए जंगल में जाता है। पूरे दिन के प्रयास के पश्चात् सायंकाल एक जीवित शृगालशिशु को लाकर शेरनी को देता है। वह उसे स्वजातीय और शिशु समझकर अपने तृतीय पुत्र के रूप में स्वीकारती है। एक दिन एक हाथी वहाँ आ गया। वे दोनों सिंहशावक हाथी को देखकर क्रोधित हुए किन्तु शृगालशिशु दोनों भाइयों को हतोत्साहित करता हुआ वापस आया और सिंहनी से दोनों सिंह शावकों की शिकायत करने लगा। इस पर वह सिंहनी उस शृगालपुत्र से कहती है– हे पुत्र! तू शूर है, बुद्धिमान् है और दर्शनीय भी है, किन्तु जिस (शृगाल) कुल में तू पैदा हुआ है, उसमें हाथी नहीं मारे जाते।

कस्मिंश्चिदुद्देशे सिंहदम्पती प्रतिवसतः स्म। अथ सिंही पुत्रद्वयमजीजनत्। सिंहोऽपि नित्यमेव मृगान् व्यापाद्य सिंह्यै ददाति। अथान्यस्मिन्नहनि तेन किमपि नासादितम्। वने भ्रमतोऽपि तस्य रविरस्तं गतः। अथ तेन स्वगृहमागच्छता शृगालशिशुः प्राप्तः। स च बालकोऽयमित्यवधार्य, यत्नेन

दंष्ट्रामध्यगतं कृत्वा सिंह्यै जीवन्तमेव समर्पितवान्। ततः सिंह्याभिहितं – "भो कान्त! त्वयानीतं किञ्चिदस्माकं भोजनम्?" सिंह आह – "प्रिये! मयाद्यैनं शृगालशिशुं परित्यज्य न किञ्चित्सत्त्वमासदितम्। स च मया बालोऽयमिति मत्वा न व्यापादितो विशेषात् स्वजातीयश्च। उक्तञ्च–

स्त्रीविप्रलिङ्गिबालेषु प्रहर्त्तव्यं न कर्हिचित्।
प्राणात्ययेऽपि सञ्जाते विश्वस्तेषु विशेषतः।।

इदानीं त्वमेनं भक्षयित्वा पथ्यं कुरु। प्रभातेऽन्यत्किञ्चिदुपार्जयिष्यामि।" सा प्राह – "भो कान्त! त्वया बालकोऽयमिति विचिन्त्य न हतः, तत्कथमेनमहं स्वोदरार्थे विनाशयामि? तस्मान्ममायं तृतीयः पुत्रो भविष्यति।" इत्येवमुक्त्वा सा तमपि स्वस्तनक्षीरेण परां पुष्टिमनयत्। एवं ते त्रयोऽपि शिशवः परस्पराज्ञातजातिविशेषा एकाहारविहारा बाल्यसमयं निर्वाहयन्ति स्म।

अथ कदाचित्तत्र वने भ्रमन्नरण्यगजः समायातः। तं दृष्टवा तौ सिंहसुतौ द्वावपि कुपिताननौ तं प्रति प्रचलितौ यावत्, तावत्तेन शृगालसुतेनाभिहितम् – "अहो, गजोऽयं युष्मत्कुलशत्रुः। तन्न गन्तव्यमेतस्याभिमुखम्" एवमुक्त्वा गृहं प्रति प्रधावितः। तावपि ज्येष्ठबान्धवभङ्गान्निरुत्साहतां गतौ।

अथवा, साध्विदमुच्यते–

एकेनापि सुधीरेण सोत्साहेन रणं प्रति।
सोत्साहं जायते सैन्यं भग्ने भङ्गमवाप्नुयात्।।

तथा च –

अत एव हि वाञ्छन्ति भूपा योधान् महाबलान्।
शूरान् वीरान् कृतोत्साहान् वर्जयन्ति च कातरान्।।

अथ तौ द्वावपि भ्रातरौ गृहं प्राप्य पित्रोरग्रतो विहसन्तौ ज्येष्ठभ्रातृचेष्टितमूचतुः। यथाऽयं गजं दृष्ट्वा दूरतोऽपि प्रणष्टः। सोऽपि तदाकर्ण्य कोपाविष्टमना प्रस्फुरिताधरपल्लव ताम्र-लोचन स्त्रिशिखां भृकुटिं कृत्वा तौ निर्भर्त्सयन् परुषतरवचनान्युवाच। ततः सिंह्या एकान्ते नीत्वा प्रबोधितोऽसौ – "वत्स! मैवं कदाचिज्जल्प। भवदीयलघुभ्रातरौ एतौ" इति।

अथासौ सान्त्ववचनेन प्रभूततरकोपाविष्टस्तामप्युवाच – "किमहमेताभ्यां शौर्येण, रूपेण, विद्याभ्यासेन, कौशलेन वा हीनो, येन मामुपहसतः? तन्मयावश्यमेतौ व्यापादनीयौ।" तदाकर्ण्य सिंही तस्य जीवितमिच्छन्त्यन्तर्विहस्य प्राह–

शूरोऽसि कृतविद्योऽसि दर्शनीयोऽसि पुत्रक!
यस्मिन् कुले त्वमुत्पन्नो गजस्तत्र न हन्यते।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

सिंहदम्पती	:	शेर और शेरनी।
अजीजनत्	:	पैदा किया।
व्यापाद्य	:	मारकर।
अहनि	:	दिन में।
न आसादितम्	:	नहीं मिला।
शृगालशिशुः	:	शृगाल का बच्चा।
दंष्ट्रामध्यगतं	:	दंष्ट्रायाः मध्यगतं दंष्ट्रामध्यगतम्, दाढों के बीच में।
जीवन्तम् एव	:	जीव + शतृ+ (अत्) तम् जीवन्तम्, जीवित ही।

समर्पितवान्	:	दिया।
अभिहितम्	:	कहा।
परित्यज्य	:	परि + त्यज् + क्त्वा (ल्यप्) (य), त्यागकर।
मत्वा	:	मानकर।
न व्यापादितः	:	नहीं मारा (गया)।
प्राणात्ययेऽपि	:	प्राणानाम् अत्ययः प्राणात्ययः तस्मिन्, प्राण संकट में भी।
भक्षयित्वा	:	खाकर।
प्रभाते	:	प्रातःकाल।
उपार्जयिष्यामि	:	उपार्जन करूँगा।
स्वोदरार्थे	:	उदरस्य अर्थम् उदरार्थम् तस्मिन्, उदरपूर्ति निमित्त।
स्वस्तनक्षीरेण	:	अपने स्तन के दूध से।
निर्वाहयन्ति स्म	:	व्यतीत करते थे।
अरण्यगजः	:	अरण्यस्य गजः अरण्यगजः, जंगली हाथी।
कुपिताननौ	:	कुपितम् आननं ययोस्तौ कुपिताननौ, क्रोधित मुख वाले।
अभिमुखम्	:	सम्मुख।
निरुत्साहतां	:	हतोत्साहित।
सैन्य	:	सेना।
भूपाः	:	राजा।
पित्रोः	:	माता च पिता च पितरौ तयोः पित्रोः (एकशेष), माता-पिता के।
पल्लवताम्रलोचनः	:	पल्लव इव ताम्रे लोचने यस्य सः, नए पत्ते के समान लाल-लाल आँखों वाला।
मा जल्प	:	न कहो।
न हन्यते	:	नहीं मारा जाता।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं देयम्

(क) अयं पाठः कस्माद् ग्रन्थात् सङ्कलितः ?

(ख) सिंहः मृगान् व्यापाद्य कस्यै ददाति स्म ?

(ग) शृगालशिशुः केन प्राप्तः?

(घ) सिंहेन शृगालशिशुः किमर्थं न व्यापादितः ?

(ङ) सिंह्याः तृतीयः पुत्रः कः अभवत् ?

(च) सिंहसुतौ कं दृष्ट्वा कुपिताननौ अभवताम् ?

(छ) गजः कस्य कुलशत्रुः अस्ति ?

2. रिक्तस्थानपूर्तिः क्रियताम्

(क) तेन ________ नासादितम्।

(ख) त्वया ________ भोजनम्।

(ग) स्त्रीविप्र ________ विशेषतः।

(घ) अथ कदाचित् ________ समायातः।

(ङ) यथायं ________ प्रणष्टः।

(च) शूरोऽसि ________ न हन्यते।

3. अधोलिखितयोः गद्यांशयोः भावार्थं लिखत

(क) स च मया बालोऽयमिति मत्वा न व्यापादितो विशेषात् स्वजातीयश्च।

(ख) तस्मान्ममायं तृतीयः पुत्रो भविष्यति।

4. 'क' भागस्य पदैः सह 'ख' भागस्यार्थानां मेलनं क्रियताम्

'क'	'ख'
सिंहः	शावकः
शृगालशिशुः	विहाय
परित्यज्य	श्रुत्वा
बालः	मृगेन्द्रः

पुत्रः	जम्बुकशिशुः
गजोऽयम्	तनयः
आकर्ण्य	नगोऽयम्

5. उदाहरणानुसारं विग्रहपदानि आधृत्य समस्तपदानि रचयत

यथा – विग्रहपदानि समस्तपदानि

सिंहस्य दम्पती = सिंहदम्पती

स्वस्य गृहम् = ____________

प्राणानाम् अत्ययः = ____________

सिंहस्य सुतौ = ____________

पल्लवताम्रे लोचने यस्य = ____________

षष्ठः पाठः

प्राचीनं जलविज्ञानम्

आकाश से गिरने वाला जल, वायु और भूमि के संसर्ग से विभिन्न रंग और स्वाद का हो जाता है। यही जल पृथ्वी के नीचे कितना खोदने पर खारा या मीठा, मृदु या रूक्ष मिलेगा – इसकी गणना संस्कृत के प्राचीन वैज्ञानिकों ने की है। आचार्य वराहमिहिर ने अपनी "बृहत्संहिता" के "दकार्गल" अध्याय में इसका विवेचन करते हुए बताया है कि जल की शिराएँ भिन्न-भिन्न स्थितियों में ऊपर-नीचे के तलों पर विद्यमान रहती हैं जहाँ अपार जलराशि न्यूनाधिक रूप में उपलब्ध होती है। मरुप्रदेश में जलभंडार की प्राप्ति के क्या-क्या लक्षण हैं – इसका भी वर्णन उक्त अध्याय में किया गया है। यह पाठ वहीं से उद्धृत है।

धर्म्यं यशस्यं च वदाम्यतोऽहं दकार्गलं येन जलोपलब्धिः।
पुंसां यथाङ्गेषु शिरास्तथैव क्षितावपि प्रोन्नतनिम्नसंस्थाः।।1।।

एकेन वर्णेन रसेन चाम्भश्च्युतं नभस्तो वसुधाविशेषात्।
नानारसत्वं बहुवर्णतां च गतं परीक्ष्यं क्षितितुल्यमेव।।2।।

यदि वेतसोऽम्बुरहिते देशे हस्तैस्त्रिभिस्ततः पश्चात्।
सार्धे पुरुषे तोयं वहति शिरा पश्चिमा तत्र।।3।।

चिह्नमपि चार्धपुरुषे मण्डूकः पाण्डुरोऽथ मृत्पीता।
पुटभेदकश्च तस्मिन् पाषाणो भवति तोयमधः।।4।।

जम्बूवृक्षस्य प्राग् वल्मीको यदि भवेत् समीपस्थः।
तस्माद् दक्षिणपार्श्वे सलिलं पुरुषद्वये स्वादु।।5।।

अर्धपुरुषे च मत्स्यः पारावतसन्निभश्च पाषाणः।
मृद् भवति चात्र नीला दीर्घकालं च बहु तोयम्।।6।।

मरुदेशे भवति शिरा यथा तथातः परं प्रवक्ष्यामि।
ग्रीवा करभाणामिव भूतलसंस्थाः शिराः यान्ति।।7।।

उत्तरतश्च मधूकादहिनिलयः पश्चिमे तरोस्तोयम्।
परिहृत्य पञ्चहस्तानर्धाष्टमपौरुषान् प्रथमम्।।8।।

उत्तरतश्च करीरस्याहिगृहं दक्षिणे जलं स्वादु।
दशभिः पुरुषैः ज्ञेयं पुरुषे पीतोऽत्र मण्डूकः।।9।।

यदि वा सुवर्णनाम्नः तरोर्भवेद् वामतो भुजङ्गगृहम्।
हस्तद्वये तु याम्ये पञ्चदशनरावसानेऽम्बु।।10।।

क्षारं पयोऽत्र नकुलोऽर्धमानवे ताम्रसन्निभश्चाश्मा।
रक्ता च भवति वसुधा वहति शिरा दक्षिणा तत्र।।11।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

यशस्यम्	:	यश देने वाला।
दकार्गलम्	:	जलनिबन्धन (जल को सुरक्षित रखने का स्थान)।
क्षितौ	:	पृथिवी पर।
प्रोन्नतनिम्नसंस्थाः	:	ऊँचे नीचे रूप में स्थित।
रसेन	:	स्वाद से।
अम्भः	:	जल।
नभस्तः	:	आकाश से।
च्युतम्	:	पतित (गिरा हुआ)।

परीक्ष्यम्	:	जाँच करने योग्य।
बहुवर्णताम्	:	बहुत प्रकार के रंगों के रूप में।
वेतसः	:	वेंत के वृक्ष से।
अम्बुरहिते	:	पानी से रहित।
सार्धे पुरुषे	:	डेढ़ पुरुष के शरीर की लम्बाई के बराबर (साढ़े सात हाथ पर) (7½ Cubits)।
शिरा	:	शिरा (नस) जलवाहिनी।
पाण्डुरः	:	श्वेतपीत (सफेदी लिये हुए हल्का पीला)।
मृत्पीता	:	पीली मिट्टी।
पुटभेदकः पाषाणः	:	कठोर पत्थर।
जम्बूवृक्षस्य प्राक्	:	जामुन के वृक्ष से पूर्व।
वल्मीकः	:	बमई (चींटियों द्वारा निकाली गई भुरभुरी मिट्टी का ढेर)।
पुरुषद्वये	:	दो पुरुषों की लम्बाई के बराबर (10 हाथ या 10 Cubits)
स्वादु	:	स्वादिष्ट।
दक्षिणपार्श्वे	:	दक्षिण की ओर।
मत्स्यः	:	मछली।
पारावतसन्निभः	:	कबूतर के समान।
मरुदेशे	:	मरुस्थल में।
ग्रीवा	:	गर्दन।
करभाणाम्	:	ऊँटों की।
भूतलसंस्थाः	:	पृथ्वी की सतह पर स्थित।
मधूकात्	:	महुए के पेड़ से।
उत्तरतः	:	उत्तर की ओर।
अहिनिलयः	:	साँप का घर (बमई)।
पञ्चहस्तान्	:	पाँच हाथ।
परिहृत्य	:	छोड़कर।
करीरस्य	:	करील वृक्ष के।

अहिगृहम्	साँप का घर (बमई)।
दशभिः पुरुषैः	दस पुरुषों के बराबर लम्बाई (50 हाथ – 50 Cubits)।
सुवर्णनाम्नः तरोः वामतः	अमलतास के वृक्ष के बाईं ओर।
हस्तद्वये	दो हाथ की दूरी पर।
याम्ये	बाईं ओर।
पञ्चदशनरावसाने	पन्द्रह पुरुषों की लम्बाई के बराबर की गहराई पर (पचहत्तर हाथ की गहराई पर)।
अर्धमानवे	आधे मनुष्य की लम्बाई के बराबर (ढाई हाथ)।
नकुलः	नेवला।
ताम्रसन्निभः	ताम्बे के रंग के समान।
अश्मा	पत्थर।
भुजङ्गगृहम्	साँप का घर (बमई)।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत**

   (क) 'दकार्गलम्' शब्दस्य कः अर्थः ?

   (ख) स्वादु जलं कुत्र (कीदृश्यां भूमौ) लभ्यते ?

   (ग) कीदृशी सा भूमिः यत्र बहुकालस्थितम् अत्यधिकं च जलं प्राप्यते?

   (घ) यत्र करीरवृक्षस्य उत्तरतः अहिगृहं स्यात् तत्र किं वैशिष्ट्यम्?

   (ङ) क्षारं जलं कीदृशे स्थाने प्राप्यते।

2. **अयं पाठः कस्मात् ग्रन्थात् गृहीतः ? किं च तद्ग्रन्थस्य वैशिष्ट्यम्?**

3. **अस्य पाठस्य सारांशः संक्षेपेण लेखनीयः?**

4. **अस्मिन् पाठे जलविज्ञानविषये कानि रहस्यानि वर्णितानि ?**

5. **निम्नलिखितानां शब्दानाम् आशयः प्रकाशनीयः**

वल्मीकः, अर्धपुरुषः, पारावतसन्निभः, ग्रीवा, करभाणामिव, अर्धाष्टमपौरुषान्, भुजङ्गगृहम्, ताम्रसन्निभः, अश्मा, पुटभेदकः पाषाणः, पञ्चदशनरावसाने।

6. **निम्नाङ्कितानां पदानाम् अर्थमेलनं कुरुत**

क्षितौ	पाषाणः
च्युतम्	आकाशात्
नभस्तः	पृथिव्याम्
पुटभेदकः	स्वादिष्टः
स्वादु	कठोरः
अश्मा	पतितम्

7. **अधोलिखितयोः श्लोकयोः भावार्थौ लेख्यः**

यदि वेतसोऽम्बुरहिते देशे हस्तैस्त्रिभिस्ततःपश्चात्।
सार्धे पुरुषे तोयं वहति शिरा पश्चिमा तत्र।।
चिह्नमपि चार्धपुरुषे मण्डूकः पाण्डुरोऽथ मृत्पीता।
पुटभेदकश्च तस्मिन् पाषाणो भवति तोयमधः।।

विशेष

(1) **दकार्गलम्**– 'दक' शब्द 'उदक' का लघु रूप है, जिसका अर्थ है 'जल'। 'अर्गला' शब्द का अर्थ है 'सांकल' (किवाड़ बन्द करने का उपकरण)। इस प्रकार 'दकार्गल' का अर्थ हुआ जल को सुरक्षित रोके रखने व नियंत्रित (निबन्धित) करने का विज्ञान।

(2) **पुरुष** – इस पाठ में 'पुरुष' शब्द पारिभाषिक है। यहाँ 'पुरुष' शब्द का अर्थ है – पुरुष के शरीर के बराबर परिमाण। 'पुरुष परिमाण' से अभिप्राय है – हाथ ऊँचा करके खड़े हुए पुरुष के बराबर लम्बाई, जिसको पाँच हाथ (5 Cubits) के बराबर माना गया है।

सप्तमः पाठः

सुभाषितसञ्जीविनी

प्रस्तुत पाठ महाकवि भर्तृहरि कृत "नीतिशतकम्" नामक पुस्तक से संकलित है, जिसमें सत्संगति का महत्त्व, महापुरुषों की मनोवृत्ति, धन की गति, दुर्जन और सज्जन की मित्रता में अन्तर, महापुरुषों के भूषण, पुत्र, पत्नी और मित्र के लक्षण, सज्जनों के द्वारा ग्राह्य पदार्थ, जीवन के कर्त्तव्याकर्त्तव्यों का विवेचन, अनुशासित एवं कृतज्ञतापूर्ण जीवनयापन का कठिन व्रत, आलस्य का त्याग एवं उद्यम का अवलम्बन करने सम्बन्धी नीतिपरक सूक्तियों का संकलन है।

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यम्
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिम्
सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।।1।।

कुसुमस्तबकस्येव द्वयी वृत्तिर्मनस्विनः।
मूर्ध्नि वा सर्वलोकस्य विशीर्येत वनेऽथवा।।2।।

दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति।।3।।

आरम्भगुर्वी क्षयिणी क्रमेण
लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात्।
दिनस्य पूर्वार्धपरार्धभिन्ना
छायेव मैत्री खलसज्जनानाम्।।4।।

करे श्लाघ्यस्त्यागः शिरसि गुरुपादप्रणयिता
मुखे सत्या वाणी विजयि भुजयोर्वीर्यमतुलम्।
हृदि स्वच्छा वृत्तिः श्रुतिमधिगतं च श्रवणयो-
र्विनाऽप्यैश्वर्येण प्रकृतिमहतां मण्डनमिदम्।।5।।

यः प्रीणयेत्सुचरितैः पितरं स पुत्रो
यद्भर्तुरेव हितमिच्छति तत्कलत्रम्।
तन्मित्रमापदि सुखे च समक्रियं य-
देतत्त्रयं जगति पुण्यकृतो लभन्ते।।6।।

तृष्णां छिन्धि भज क्षमां जहि मदं पापे रतिं मा कृथाः
सत्यं ब्रूह्यनुयाहि साधु पदवीं सेवस्व विद्वज्जनम्।
मान्यान्मानय विद्विषोऽप्यनुनय प्रख्यापय प्रश्रयम्
कीर्तिं पालय दुःखिते कुरु दयामेतत्सतां लक्षणम्।।7।।

प्रदानं प्रच्छन्नं गृहमुपगते सम्भ्रमविधिः
प्रियं कृत्वा मौनं सदसि कथनं चाप्युपकृतेः।
अनुत्सेको लक्ष्म्यामनभिभवगन्धाः परकथाः
सतां केनोद्दिष्टं विषममसिधाराव्रतमिदम्।।8।।

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः।
नास्त्युद्यमसमो बन्धुः कुर्वाणो नावसीदति।।9।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

धियः	:	बुद्धि को।
जाड्यम्	:	जड़ता (मन्द गति) को।
वाचि	:	वाणी में।
दिशति	:	(मार्ग) दिशा प्रशस्त करती है।

अपाकरोति	:	दूर करती है।
चेतः	:	चित्त को, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार – ये अन्तःकरण के चार विभाग हैं जिनमें चित्त भावों को सुरक्षित रखता है।
दिक्षु	:	दिशाओं में।
तनोति	:	विस्तार करता है।
कीर्तिम्	:	कीर्ति को, यश को।
पुंसाम्	:	व्यक्तियों का।
कुसुमस्तवकस्येव	:	कुसुमस्य स्तवकस्य इव, पुष्पों के गुच्छों के समान।
वृत्तिः	:	व्यवहार, आचरण।
मनस्विनः	:	स्वाभिमानियों की।
मूर्ध्नि	:	शीर्ष स्थान पर।
सर्वलोकस्य	:	सभी प्राणियों के।
विशीर्येत	:	बिखर जाता है।
भोगः	:	उपभोग करना।
नाशः	:	विनाश होना, नष्ट होना, अन्त होना।
गतयः	:	परिणति, परिणाम।
वित्तस्य	:	धन की।
भुङ्क्ते	:	उपयोग करता है।
गुर्वी	:	घनी, सघन, गहरी।
क्षयिणी	:	घटने वाली।
क्रमेण	:	क्रम से।
लघ्वी	:	छोटी, कम मात्रा में।
वृद्धिमती	:	वर्धनशील, बढ़नेवाली।
पश्चात्	:	बाद में।
पूर्वार्ध	:	दोपहर के पूर्व का समय।
परार्ध	:	दोपहर के बाद का समय।

छायेव	:	छाया के समान, (प्रातःकाल की छाया बड़ी होती जाती है और मध्याह्न तक छोटी हो जाती है। मध्याह्न के बाद की छाया छोटी से क्रमशः बड़ी होती जाती है। उसी प्रकार सज्जनों और दुर्जनों की मित्रता का विकास एवं संकोच होता है)।
श्लाघ्यः	:	प्रशंसा, आत्मप्रशंसा का त्याग महापुरुषों का भूषण है।
गुरुपादप्रणयितां	:	गुरुपादयोः प्रणयिता अर्थात् प्रणाम, गुरु के चरणों में प्रणामशीलता।
श्रुतिमधिगतं	:	वेदों की ध्वनि से युक्त होना।
मण्डनम्	:	विभूषण, शोभा, अलंकार।
कलत्रम्	:	स्त्री, पत्नी, भार्या, अर्धांगिनी।
छिन्धि	:	विच्छिन्न कर दो, दूर करो।
जहि	:	त्याग दो, छोड़ दो।
कृथाः	:	करो।
प्रश्रयम्	:	आश्रय ग्रहण करने वाले को।
सम्भ्रमविधिः	:	हड़बड़ाहट, स्वागत करने की आतुरता।
अवसीदति	:	खिन्न होता है, अवसाद को प्राप्त होता है।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं देयम्

   (क) नीतिशतकस्य रचयिता कः अस्ति ?

   (ख) वाचि सत्संगतिः किं करोति ?

   (ग) मनस्विनः वृत्तिः कस्य इव भवति ?

(घ) वित्तस्य तिस्रः गतयः काः भवन्ति ?

(ङ) छायेव मैत्री केषां भवति ?

(च) पुण्यकृतो जगति किं त्रयं लभन्ते ?

(छ) सतां त्रीणि लक्षणानि कानि ?

(ज) असिधाराव्रतं केषां भवति ?

(झ) मनुष्याणां महान् शत्रुः कः ?

2. रिक्तस्थानपूर्तिः क्रियताम्

(क) सत्संगतिः चेतः ______________ ।

(ख) कुसुमस्तबकः वने ______________ ।

(ग) वित्तस्य ______________ तिस्रः भवन्ति ।

(घ) महतां शिरसि ______________ ।

(ङ) यद् भर्तुः ______________ तत्कलत्रम् ।

(च) नास्ति ______________ बन्धुः ।

3. अधोलिखितयोः पद्यांशयोः भावार्थं लिखत

(क) द्वयी वृत्तिर्मनस्विनः

(ख) प्रकृतिमहतां मण्डनमिदम्

(ग) एतत् सतां लक्षणम्

(घ) तेषु एव लोकस्थितिः

4. 'क' भागस्थपदैः सह 'ख' भागस्यार्थानां मेलनं क्रियताम्

'क'	**'ख'**
मित्रम्	गुरुपादप्रणयिता
मुखे	मैत्री
श्रवणयोः	सत्या वाणी
भुजयोः	दयाम्
शिरसि	समक्रियम्
वृद्धिमती	वीर्यमतुलम्
दुःखिते	श्रुतिमधिगतम्
मौनं	आलस्यम्
शत्रुः	सदसि

5. उदाहरणानुसारं विग्रहपदानि आधृत्य समस्तपदानि रचयत

यथा– विग्रहपदानि		समस्तपदानि
मानस्य उन्नतिम्	=	मानोन्नतिम्
कुसुमानाम् स्तबकः	=	______
पूर्वं च तत् अर्धं	=	______
गुरुपादयोः प्रणयिता	=	______
शरीरे स्थितः	=	______

अष्टमः पाठः

व्यवसाये विक्रयसिद्धान्तविवेचनम्

प्रस्तुत पाठ कौटिल्य (चाणक्य) कृत 'अर्थशास्त्र' नामक ग्रन्थ के 'पण्याध्यक्ष' नामक सोलहवें अध्याय से संकलित किया गया है। कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में तत्कालीन संघराज्यों की शासन-व्यवस्था के लिए प्रचुर धन के रूप में राजकोष की वृद्धि के उपायों का वर्णन किया है। राजा को स्वदेश और परदेश की वस्तुओं की बिक्री का ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये, जिससे प्रजा को किसी प्रकार का कष्ट न हो। गोदाम में सुरक्षित माल का सोलहवाँ भाग कर रूप में राजा को देना चाहिए। उसे व्याजी या मानव्याजी कहा जाता है। प्रस्तुत अंश में पण्याध्यक्ष के कार्य-अकार्य के विषय में वर्णन किया गया है। परदेश में निर्यात-व्यापार के सम्बन्ध में पण्याध्यक्ष को चाहिए कि वह इस पर विचार कर इस तरह व्यापार कार्य करे कि स्वदेश तथा विदेश में बेची जाने वाली किन चीजों के मूल्य में परस्पर न्यूनाधिक्य है, इसके अतिरिक्त बिक्रीकर, सीमान्त अधिकारी का कर, सुरक्षा के लिए पुलिस का मार्गकर, जंगल के रक्षक का कर, नदी पार कर तथा अपने भोजनादि के व्यय को निकाल कर शेष लाभ पर विचार करना चाहिए।

पण्याध्यक्षः स्थलजलजानां नानाविधानां पण्यानां स्थलपथ-वारिपथोपयातानां प्रियाप्रियतां च विद्यात्, तथा विक्षेपसंक्षेप-क्रयविक्रययोगकालान्। यच्च पण्यं प्रचुरं स्यात् तदेकीकृत्य

अर्घमारोपयेत्। प्राप्तेऽर्घे वा अर्घान्तरं कारयेत्। स्वभूमिजानां राजपण्यानाम् एकमुखं व्यवहारं स्थापयेत्।

परभूमिजानाम् अनेकमुखम्। उभयं च प्रजानाम् अनुग्रहेण विक्रापयेत्। बहुमुखं वा राजपण्यं वैदेहकाः कृतार्घं विक्रीणीरन्। छेदानुरूपं च वैधरणं दद्युः। पण्याधिष्ठातारः पण्यमूल्यम् एकमुखं काष्ठद्रोण्याम् एकच्छिद्रापिधानायां निदध्युः। अह्नः च अष्टमे भागे पण्याध्यक्षस्य अर्पयेयुः। "इदं विक्रीतम् इदं शेषमिति"। तुलामानभाण्डकं चार्पयेयुः। इति स्वविषये व्याख्यातम्।

परविषये तु पण्यप्रतिपण्योरर्घं मूल्यं च आगमय्य शुल्क वर्तन्यातिवाहिकगुल्मतरदेयभक्तभाटक-व्ययशुद्धमुदयं पश्येत्। असति उदये भाण्डनिर्वहणेन पण्य-प्रतिपण्यार्घेण वा लाभं पश्येत्।

आपदि सारमात्मानं वा मोक्षयेत्। आत्मनो वा भूमिमप्राप्तः सर्वदेयमशुद्धं व्यवहरेत्। वारिपथे वा यानभाटकपथ्यदनपण्य-प्रतिपण्यार्घप्रमाणयात्राकालभय-प्रतीकारपण्यपत्तनचारित्राणि उपलभेत।

नदीपथे च विज्ञाय व्यवहारं चरित्रतः।
यतो लाभस्ततो गच्छेदलाभं परिवर्जयेत्।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

पण्याध्यक्षः : पण्यानाम् अध्यक्षः, वस्तुओं के क्रय-विक्रय के कार्य में नियुक्त (व्यक्ति)।

पण्यम् : क्रय-विक्रय के योग्य (वस्तु)।

पण्यानाम्	:	क्रय-विक्रय (वस्तुओं) का, लेन-देन के योग्य (वस्तुओं) का।
स्थलजलजानाम्	:	स्थल (मिट्टी) तथा जल से उत्पन्न (वस्तुओं) का।
स्थलपथवारिपथोपयातानाम्	:	स्थल और जल के मार्ग से लाई गई (वस्तुओं) का।
विद्यात्	:	समझे, जानें।
प्रियाप्रियताम्	:	शीघ्रबिक्री तथा मन्दबिक्री।
विक्षेपसंक्षेपक्रयविक्रययोगकालान्	:	विक्षेप (निस्तारण), संक्षेप (भण्डारण), क्रय एवं विक्रय के योग के समय को।
प्राप्तेऽर्घे	:	प्राप्ते अर्घे (मूल्ये), मूल्य के प्राप्त होने पर।
अर्घान्तरम्	:	मूल्य में तारतम्य।
स्वभूमिजानाम्	:	अपनी भूमि से (स्वदेश में) उत्पन्न वस्तु।
राजपण्यानाम्	:	राजकीय क्रय-विक्रय योग्य वस्तुओं का।
एकमुखम्	:	एक स्थान पर।
परभूमिजानाम्	:	दूसरे की भूमि (विदेश) से उत्पन्न वस्तु।
अनेकमुखम्	:	सभी स्थान पर।
अनुग्रहेण	:	बिना कष्ट के।
बहुमुखम्	:	बहुत स्थानों पर।
विक्रापयेत्	:	विक्रयं कारयेत्, विक्रय कराये।
वैदेहिकाः	:	व्यापारी।
पण्याधिष्ठातारः	:	राजकीय वस्तुओं का विक्रेता।
छेदानुरूपम्	:	छेदः, अर्घहानिः तस्याः अनुरूपम्, मूल्यों की हानि के अनुरूप।
काष्ठद्रोण्याम्	:	लकड़ी की पेटी में।

एकच्छिद्रापिधानायाम्	:	एक छेद वाली में अर्थात् एक द्वार वाली (पेटी) में।
निदध्युः	:	डाल दे।
वैधरणम्	:	जितनी मूल्य हानि हो उसकी मात्रा को 'वैधरण' कहते हैं।
अह्नः	:	दिन के।
अष्टमे भागे	:	आठवें भाग में (विक्रय काल की समाप्ति पर)।
तुलामानभाण्डकम्	:	तराजू के द्वारा मापक, बर्तन।
पण्यप्रतिपण्ययोः	:	स्वदेश एवं विदेश के क्रय, विक्रय की (वस्तुओं का)।
आगमय्य	:	विज्ञाय, जानकर।
शुल्कवर्तन्यातिवाहिक-गुल्मतरदेयभक्तभाटक-व्ययशुद्धम्	:	शुल्कादिव्ययशोधितावशेषम्। शुल्क, वर्तनी (मार्ग), आतिवाहिक (बैलगाड़ी), गुल्म (वनस्थानिक), तर (नदी को पार करना), तथा भक्त (भोजन), भाटक (मजदूरी) में किये गये व्यय के बाद का अवशेष।
उदयम्	:	लाभ।
असति उदये	:	लाभ न होने पर।
भाण्डनिर्वहणेन	:	बर्तन को ले जाने से।
सारम्	:	रत्नादि द्रव्य।
मोक्षयेत्	:	रक्षयेत्, रखना चाहिये।
भूमिमप्राप्तः	:	स्वपण्यविक्रयभूमिभूतात् स्वविषयम् अप्रत्यागतः, अपनी वस्तु के विक्रय के लिए भूमि की अप्राप्ति होने पर।
सर्वदेयविशुद्धम्	:	शुल्कादिदेयरहितम्, शुल्कादि के व्यय से रहित।

वारिपथे	:	जल के रास्ते में।
यानभाटकपथ्यदनपण्य-प्रतिपण्यार्घप्रमाणयात्रा-कालभयप्रतीकारपण्य-पत्तनचारित्राणि-	:	यानभाटक (नाविक मजदूरी), पथ्यदन (मार्ग भोजन) पण्यप्रतिपण्यार्घप्रमाण (वस्तु के बदले वस्तु के मूल्य का तारतम्य) भयप्रतीकार (तस्करादिभय का प्रतीकार) पण्यपत्तनचारित्राणि (अपनी वस्तु के विक्रयस्थान के पत्तन के चरित्र) को।
व्यवहारम्	:	वाणिज्यम्, व्यापार को।
चरित्रतः	:	तद्देशाचारानुरोधेन, सम्बन्धित देश के आचार के अनुरोध से।
यतः	:	येन पथा, जिस मार्ग से।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत**

(क) अयं पाठः कस्माद् ग्रन्थात् सङ्कलितः कश्च अस्य प्रणेता?
(ख) केषाम् एकमुखं व्यवहारं स्थापयेत् केषाञ्च अनेकमुखम्?
(ग) वैधरणं केनानुरूपं दद्युः?
(घ) स्वविषये किं व्याख्यातम्?
(ङ) आत्मानं सारं कदा भोक्षयेत्?
(च) केन पथा गच्छेत् परिवर्जयेत् च?
(छ) वारिपथे कानि उपलभेत?
(ज) असति उदये केन लाभं पश्येत्?

2. **व्याख्येयः**

नदीपथे च विज्ञाय व्यवहारं चरित्रतः।
यतो लाभस्ततो गच्छेदलाभं परिवर्जयेत्।।

3. **रिक्तस्थानानां पूर्तिः क्रियताम्**

(क) बहुमुखं वा ________ वैदेहकाः ________ विक्रीणीरन्।

(ख) स्वभूमिजानां ________ एकमुखं ________ स्थापयेत्।

(ग) ________ अष्टमे भागे पण्याध्यक्षस्य ________ ।

(घ) असति उदये ________ पण्यप्रतिपण्यार्घेण वा ________ पश्येत्।

(ङ) परभूमिजानाम् ________ अनेकमुखं भवति।

4. **अधोलिखितानामाशयं स्पष्टीकुरुत**

(क) पण्याध्यक्षः स्थलजलजानां नानाविधानां पण्यानां प्रियाप्रियतां च विद्यात्।

(ख) उभयं च प्रजानाम् अनुग्रहेण विक्रापयेत्।

(ग) तुलामानभाण्डकं चार्पयेयुः।

(घ) आत्मनो वा भूमिमप्राप्तः सर्वदेयमशुद्धं व्यवहरेत्।

(ङ) छेदानुरूपं च वैधरणं दद्युः।

5. **पाठमधिकृत्य विक्रयसिद्धान्तस्य विवेचनं कुरुत।**

6. **अधोलिखितपदानाम् अर्थमेलनं क्रियताम्**

पण्यम्	एक स्थान पर
परभूमिजानाम्	व्यापारी
वैदेहकाः	तराजू के द्वारा मापक बर्तन
एकमुखम्	मूल्य हानि की मात्रा
तुलामानभाण्डकम्	क्रय-विक्रय योग्य वस्तु
वैधरणम्	विदेशों में उत्पन्न वस्तुओं का

नवमः पाठः

स्वास्थ्यरक्षणोपायाः

प्रस्तुत पाठ 'स्वास्थ्यरक्षणोपायाः' शीर्षकान्तर्गत आयुर्वेदशास्त्रपरम्परा के महान् विद्वान् श्री वाग्भट्टविरचित 'अष्टाङ्गहृदयम्' नामक ग्रन्थ के दिनचर्याध्याय से संकलित किया गया है। स्वास्थ्य संरक्षण के लिए जहाँ शरीर पोषण करने वाले भोजन की आवश्यकता है, वहीं उचित दिनचर्या के पालन करने की सर्वाधिक आवश्यकता है। उन उपायों में अभ्यङ्ग-स्नान, व्यायाम एवं विद्वानों की सेवा करना आदि स्वास्थ्य संवर्धन करने वाले कुछ उपायों का इस पाठ में वर्णन किया गया है।

अभ्यङ्गमाचरेन्नित्यं स जराश्रमवातहा।
दृष्टिप्रसादपुष्ट्यायुः स्वप्नसुत्वक्त्वदार्ढ्यकृत्।।1।।
शिरः श्रवणपादेषु तं विशेषेण शीलयेत्।
वर्ज्योऽभ्यङ्गः कफग्रस्तकृतसंशुद्ध्यजीर्णिभिः।।2।।
लाघवं कर्मसामर्थ्यं दीप्तोऽग्निर्मेदसः क्षयः।
विभक्तघनगात्रत्वं व्यायामादुपजायते।।3।।
उद्वर्तनं कफहरं मेदसः प्रविलायनम्।
स्थिरीकरणमङ्गानां त्वक्प्रसादकरं परम्।।4।।
दीपनं वृष्यमायुष्यं स्नानमूर्जाबलप्रदम्।
कण्डूमलश्रमस्वेदतन्द्रातृड्दाहपाप्मजित्।।5।।
उष्णाम्बुनाऽधः कायस्य परिषेको बलावहः।
तेनैव तूत्तमाङ्गस्य बलहृत्केशचक्षुषाम्।।6।।

देहवाक्चेतसां चेष्टाः प्राक् श्रमाद्विनिवर्तयेत्।
नोर्ध्वजानुश्चिरं तिष्ठेन्नक्तं सेवेत न द्रुमम्।।7।।
सर्वथेक्षेत नादित्यं न भारं शिरसा वहेत्।
नेक्षेत प्रततं सूक्ष्मं दीप्तामेध्याप्रियाणि च।।8।।
नित्यं हिताहारविहारसेवी, समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः।
दाता समः सत्यपरः क्षमावानाप्तोपसेवी च भवत्यरोगः।।9।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

अभ्यङ्गम्	:	तेल मालिश।
वातहा	:	वातम् हरति इति वातहा। वायुदोष को दूर करने वाली।
सुत्वक्त्व	:	सुन्दर त्वचा युक्त।
दार्ढ्यकृत्	:	मजबूत करने वाला।
विभक्तघनगात्रत्वम्	:	शरीर के अंग-प्रत्यंग का सुडौल गठन।
उद्वर्तनं	:	उबटन।
मेदसः	:	चर्बी तथा मोटापे का।
वृष्यम्	:	पुष्टिकारी।
कण्डूः	:	खाज, खुजली।
तृड्दाहः	:	प्यास और जलन।
पाप्मजित्	:	शरीर की अशोभा, कान्तिहीनता।
परिषेकः	:	स्नान।
बलावहः	:	बल की वृद्धि करने वाला।
उत्तमाङ्गस्य	:	अङ्गेषु उत्तमभागः शिरः तस्य, सिर का।
बलहृत्	:	बलं हरति इति, बल हरने वाला।
चक्षुषाम्	:	नेत्रों का।
विनिवर्तयेत्	:	रोक देना चाहिए।
ऊर्ध्वजानुः	:	घुटनों को ऊपर करके।

ईक्षेत	:	देखें।
प्रततम्	:	अत्यन्त, सर्वदा।
दीप्तम्	:	प्रकाशयुक्त यथा अग्नि, विद्युत् आदि।
अमेध्यम्	:	अपवित्र, मलमूत्रादि।
समीक्ष्यकारी	:	सम्यक् विचार्य कार्यं करोति अर्थात् अच्छी प्रकार विचार करके कार्य करने वाला।
विषयेष्वसक्तः	:	कामादि विषयों में आसक्त न रहने वाला।
आप्तोपसेवी	:	आप्तान् यथार्थवक्तॄन् धर्मशीलान् सेवते यः अर्थात् तत्वज्ञानी एवं विश्वसनीय व्यक्तियों के साथ निरन्तर रहने वाला।
अरोगः	:	रोगाद् रहितः अर्थात् रोग से रहित।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं देयम्

(क) 'अभ्यङ्गम्' अस्य अभिप्रायः कः ?
(ख) तैलमर्दनं विशेषेण कुत्र कर्त्तव्यम् ?
(ग) कीदृशः जनः अभ्यङ्गं नाचरेत् ?
(घ) व्यायामात् किं किं भवति ?
(ङ) उद्वर्तनेन के के लाभाः भवन्ति ?
(च) स्नानेन किं किं जायते ?
(छ) उष्णजलेन स्नानेन को लाभः ?
(ज) श्रमात् प्राक् किं विनिवर्तयेत् ?
(झ) शिरसा किं न वहेत् ?
(ञ) कीदृशः पुरुषः अरोगी भवति ?

2. रिक्तस्थानपूर्तिः करणीया

(क) विभक्तघनगात्रत्वं __________ उपजायते।

(ख) __________ कफहरं मेदसः प्रविलायनम्।

(ग) __________ तृड्दाहपाप्मजित्।

(घ) __________ उत्तमाङ्गस्य बलहृत् __________ चक्षुषाम्।

(ङ) दाता समः __________ भवत्यरोगः।

3. अधोलिखितानाम् आशयः स्पष्टीक्रियताम्

(क) दृष्टिप्रसादपुष्ट्यायुः स्वप्नसुत्वक्त्वदार्ढ्यकृत्।

(ख) वर्ज्योऽप्यङ्गः संशुद्ध्यजीर्णिभिः।

(ग) विभक्तघनगात्रत्वम्।

(घ) स्थिरीकरणमङ्गानाम्।

4. अधोलिखितकथनेषु यत् शुद्धं तत् (√) चिह्नेन तथा च अशुद्धं (X) चिह्नेन दर्शयत

(क) अभ्यङ्गेन मेदसः क्षयः न भवति।

(ख) उद्वर्तनेन तृड्दाहतन्द्रा दूरीभवति।

(ग) अप्रियाणि सदा ईक्षेत।

(घ) हिताहारविहारसेवी सदा अरोगी भवति।

5. 'क' भागस्थपदैः सह 'ख' भागस्थानाम् अर्थानाम् मेलनं क्रियताम्

'क'	'ख'
उत्तमाङ्गस्य	तृषा
नक्तम्	भास्करम्
अमेध्यम्	शिरसः
आदित्यम्	रात्रिः
तृट्	अपवित्रम्
त्वक्	आयुवर्धकम्
चक्षुषाम्	स्पर्शेन्द्रियम्
आयुष्यम्	दृशाम्

दशमः पाठः

खनिजगवेषणम्

विज्ञान के क्षेत्र में भूगर्भशास्त्र का विशिष्ट महत्त्व है क्योंकि पार्थिव जीवलोक का आधार 'भू' अर्थात् पृथ्वी है। भूगर्भ से अभिप्राय उन भौतिक पदार्थों से है जो पदार्थ इस पृथ्वी के बनाने के लिए, इसके परिवर्तन के लिए एवं इस पर स्थित स्थावर, जंगम वस्तुओं की स्थिति के लिए उत्तरदायी हैं। भूगर्भशास्त्र में मुख्य रूप से इसके अन्दर की ऊष्मा, जल एवं वायु के क्रियाकलाप तथा उनके द्वारा निर्मित स्वर्ण, रजत, ताम्र, लौह, कोयला तथा विविध गैसीय पदार्थों का अध्ययन किया जाता है। प्रस्तुत पाठ कौटिल्य अर्थशास्त्र के दूसरे अधिकरण के तीसवें प्रकरण के बारहवें अध्याय आकरकर्मात्तप्रवर्तनम् से लिया गया है। इसमें पृथ्वी की उग्र गन्धों, क्षारीय पदार्थों एवं प्रस्तर खण्ड़ों का अतिरोचक वर्णन किया गया है।

आकराध्यक्षः शुल्व-धातुशास्त्र-रस-पाक-मणि-रागज्ञः तज्ज्ञसंघो वा तज्ज्ञातकर्मकर-उपकरणसम्पन्नः किट्ट-मूष-अङ्गार-भस्मलिङ्गं वा आकरं भूतपूर्वम् अभूतपूर्वं वा भूमि-प्रस्तर-रस- धातुमत्यर्थं वर्ण-गौरवम् उग्रगन्धरसं परीक्षेत।

पर्वतानाम् अभिज्ञातोद्देशानां बिल-गुहा-उपत्यकालयन - निगूढखातेषु अन्तः प्रस्यन्दिनो जम्बू-आम्र-तालफल - पक्व-हरिद्राभेद-हरिताल- मनःशिला-क्षौद्रहिंगुलक- पुण्डरीक-शुक-

मयूर- पत्रवर्णाः सवर्णोदकौषधिपर्यन्ताः चिक्कणाः विशदा भारिकाश्च रसाः काञ्चनिकाः।

अप्सु निष्ठ्यूताः तैलवद् विसर्पिणः जलमलग्राहिणः च ताम्र-रूप्ययोः शतादुपरिवेद्धारः। तत्प्रतिरूपकम् उग्रगन्धरसं शिलाजतु विद्यात्।

सर्वधातूनां गौरववृद्धौ सत्त्ववृद्धिः। तेषामशुद्धा मूढगर्भा वा तीक्ष्णमूत्रक्षारभाविता राजवृक्ष-वट-पीलुगोपित्तरोचना महिष-खर-करभमूत्रपुरीष-पिण्डबद्धाः तत्प्रतीवापाः तदवलेपा वा विशुद्धाः स्रवन्ति। भारिकः स्निग्धो मृदुश्च प्रस्तरधातुः भूमिभागो वा पिंगलो हरितः पाटलः लोहितो वा ताम्रधातुः। काकमेचकः कपोतरोचनावर्णः श्वेतराजिनद्धो वा विस्रः सीसधातुः। ऊषरकर्बुरः पक्वलोष्ठवर्णो वा त्रपुधातुः। कुरुम्बः पाण्डुलोहितः सिन्दुवार-पुष्पवर्णो वा तीक्ष्णधातुः। काकाण्डवर्णः भूर्जपत्रवर्णो वा वैकृन्तक-धातुः। अच्छःस्निग्धः सप्रभो घोषवान् शीततीव्रः तनुरागश्च मणिधातुः। धातुसमुत्थितं तज्जातकर्मान्तेषु प्रयोजयेत्।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

आकराध्यक्षः	:	आकराणामध्यक्षः, आकर (खान—जिसमें से खनिज निकलते हैं) का अध्यक्ष।
शुल्वम्	:	शुल्व सम्बन्धी विद्या, प्राचीन काल में रस्सी (शुल्व) की सहायता से यज्ञवेदियों तथा अन्य स्थानों का नाप किया जाता था। आजकल इसे ज्यामिति (Geometry) कहा जाता है।

रसः	:	रसायनशास्त्र।
पाकः	:	पाकविधि, पकाने का प्रकार।
तज्ज्ञः	:	तेषां ज्ञाता, उन विद्याओं को जानने वाला।
कर्मकरः	:	कर्म करोति, काम को करने वाला।
उपकरणसम्पन्नः	:	उपकरणैः सम्पन्नः, कुल्हाड़ी, धौंकनी आदि यन्त्रों अथवा उपकरणों से युक्त।
किट्टमूषाङ्गारभस्मलिङ्गम्	:	किट्टञ्च मूषा च अङ्गारः, भस्म च लिङ्गम् यस्य तम् तथा भूतम्, कीटी (किसी पदार्थ-धातु आदि के बहुत छोटे-छोटे टुकड़े) मूषा (भूसी आदि), अङ्गार तथा भस्म (राख) आदि हैं पहचान जिनकी।
भूतपूर्वम्	:	पूर्वं भूतः, पुरानी (खान)।
भूमिः	:	मिट्टी।
प्रस्तरः	:	पत्थर।
रसः	:	पानी।
अत्यर्थवर्णगौरवम्	:	अत्यर्थम् अत्यधिकं वर्णस्य गौरवम्, अत्यधिक चमकदार रंग वाली।
धातुम्	:	धातु को।
उग्रगन्धम्	:	उग्रम् गन्धम्, तीखी गन्ध से युक्त।
अभिज्ञातोद्देशानाम्	:	पहले से ज्ञात या परिचित।
बिलम्	:	गड्ढा।
गुहा	:	गुफा।
उपत्यका	:	तराई।
निगूढखातेषु	:	गहरी खाइयों में।
अन्तःप्रस्यन्दिनो	:	(शिलाओं से ढके हुए) अन्दर ही अन्दर बहने वाले जल से।

जम्बूः	:	जामुन।
तालफलम्	:	ताड़ का फल।
पक्वहरिद्रा	:	पकी हुई (पक्की) हल्दी।
हरितालम्	:	हरताल।
क्षौद्रम्	:	शहद।
हिंगुलुकम्	:	विशेष राग द्रव्य।
मनःशिला	:	सलेटी रंग की विशेष शिला।
पुण्डरीकम्	:	कमल।
सवर्णोदका	:	समान रंग वाली।
चिक्कणा	:	चिकनी।
काञ्चनिका	:	सोने की खान।
विसर्पिणः	:	फैलता हुआ।
ताम्ररूप्ययोः	:	ताम्रञ्च रूप्यञ्च, तयोः, ताँबे और चाँदी की।
तत्प्रतिरूपकम्	:	उसी के समान।
शिलाजतु	:	शिलाजीत।
गौरववृद्धौ	:	भारीपन में वृद्धि।
मूढगर्भा	:	मैल जम जाने के कारण जिसके गुण दोषों का ज्ञान यथार्थ रूप से न हो सके।
तीक्ष्णमूत्राः	:	मनुष्य, हाथी, घोड़ा, गाय, गधा, बकरा आदि में से किसी का मूत्र।
क्षारभाविताः	:	तीक्ष्ण क्षार या खारीपन।
राजवृक्षः	:	अमलतास।
वटः	:	बरगद।
पीलुः	:	वृक्ष विशेष।
गोपित्तरोचना	:	गोपित्त तथा गोरोचन गेरु के प्रकार (भेद) हैं।
पुरीषपिण्डम्	:	पुरीष (मल का) पिण्ड।
अवलेपाः	:	लेप।

पाटलः	:	गुलाबी।
लोहितः	:	लाल।
काकमेचकः	:	कौए के समान काला।
कपोतरोचनावर्णः	:	कबूतर और गोरोचन की आकृति व वर्ण वाला।
श्वेतराजिनद्धः	:	सफेद रेखाओं से युक्त।
विस्रः	:	दुर्गन्धपूर्ण।
ऊषरकर्बुरः	:	ऊसर जमीन की भाँति कुछ सफेदी लिये हुये।
पक्वलोष्ठवर्णः	:	पके हुए ढेले के रंग का।
त्रपुधातुः	:	सफेद सीसा नामक धातु।
कुरुम्बः	:	चिकने पत्थरों वाला।
पाण्डुलोहितः	:	कुछ सफेद और लालिमा को लिए हुए।
सिन्दुवारपुष्पवर्णः	:	सिन्दुवार (निर्गुण्डी) पुष्प के रंग वाला।
तीक्ष्णधातुः	:	लोहा नामक धातु (लोहे का विशेष प्रकार)।
काकाण्डवर्णः	:	कौए के अण्डे के समान वर्ण वाला।
वैकृन्तकधातुः	:	इस्पाती लोहा नामक धातु।
अच्छः	:	स्वच्छ (इतना स्वच्छ कि उसमें परछाईं दिखायी दे)।
घोषवान्	:	शब्द देने वाला।
तनुरागः	:	फीके रंग वाला।
मणिधातुः	:	मणि नामक धातु।
धातुसमुत्थितम्	:	धातु (खान) आदि से प्राप्त लाभ को।
तज्जातकर्मान्तेषु	:	पुनः खान के ही कार्यों में लगाकर।

अभ्यासः

1. संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत
   (क) अस्मिन् पाठे कस्य पदार्थस्य वर्णनं कृतम् ?
   (ख) आकराध्यक्षः केषु शास्त्रेषु निष्णातो भवेत् ?
   (ग) धातुपरीक्षणे कानि लिङ्गानि ?
   (घ) काञ्चनिकायाः परीक्षणे केषां वृक्षानामावश्यकता भवति ?
   (ङ) सीसधातुः कथं भवति ?
   (च) धातूनां गौरववृद्ध्या कस्य वृद्धिर्भवति ?
   (छ) तीक्ष्णमूत्रस्य प्रयोगस्य का आवश्यकता ?

2. अधोलिखितधातूनां वर्णमेलनं क्रियताम्

धातुः	वर्णम्
ताम्रधातुः	तनुरागः
सीसधातुः	पक्वलोष्ठवर्णः
त्रपुधातुः	सिन्दुवारपुष्पवर्णः
तीक्ष्णधातुः	काकाण्डवर्णः
वैकृन्तकधातुः	हरितः पाटलः लोहितो वा
मणिधातुः	कपोतरोचनावर्णः

3. (क) धातुशोधनं कथं क्रियते ?
   (ख) खनिजगवेषणे गन्धप्रयोगः किं भवति ?

4. अस्य पाठस्य पृष्ठभूमौ कः ग्रन्थः अस्ति ?

5. स्पष्टीक्रियताम्
   शुल्वः, रसः, पाकः, उग्रगन्धम्, तीक्ष्णधातुः।

6. धातुसमुत्थितं कथं प्रयोजयेत् ?

7. निम्नाङ्कितानां धातूनां स्वरूपं लिखत
   त्रपुधातुः, वैकृन्तकधातुः, ताम्रधातुः।

एकादशः पाठः

ऋणवृद्धिप्रबन्धः

विनिवेश के द्वारा पूँजी का संवर्धन आर्थिक विकास का महत्त्वपूर्ण साधन है। इसके लिए द्रव्य की प्राप्ति विभिन्न स्रोतों से की जाती है। इसकी व्यवस्था राजकीय और निजी खजानों से ऋण रूप में होती है। ऋण का मूलधन किस्तों में चुकाने की एक निश्चित अवधि तय की जाती है और अवधि समाप्ति के पूर्व तक उस पर ब्याज देय होता हैं जो सम्पूर्ण व्यवसायों का स्रोत है। आज की व्यावसायिक और आर्थिक नीति के तहत इसकी दर मासिक और वार्षिक प्रतिशत के रूप में निश्चित होती है। संस्कृत के प्राचीन साहित्य में भी इसका उल्लेख मिलता है। आचार्य कौटिल्य ने अपने ग्रन्थ अर्थशास्त्र में इसका विस्तृत विवेचन किया है। वहाँ बताया गया हैं कि कुछ स्थितियों में ब्याज 15% तक लिया जाता था परन्तु अध्ययन के लिए (विद्यार्थियों को दिए गए ऋण के लिए) कोई ब्याज भुगतान नहीं करना पड़ता था और कुछेक खास परिस्थितियों में ऋण माफ भी कर दिया जाता था। प्रस्तुत पाठ कौटिलीय अर्थशास्त्र के तीसरे अधिकरण के 63वें प्रकरण के ग्यारहवें अध्याय के "ऋणादानम्" शीर्षक से उद्धृत है तथा तत्कालीन व्यावसायिक सिद्धान्तों में से ब्याज विषयक नीति का परिचायक है।

सपादपणा धर्म्या मासवृद्धिः पणशतस्य।
पञ्चपणा व्यावहारिकी।
दशपणा कान्तारगाणाम्।
विंशतिपणाः सामुद्राणाम्।

ततः परं कर्तुः कारयितुश्च साहसदण्डः।

श्रोतृणामेकैकं प्रत्यर्धदण्डः।

राजन्य योगक्षेमवहे तु धनिकधारणिकयोश्चरित्रमवेक्षेत।

धान्यवृद्धिः शस्यनिष्पत्तौ उपार्घा, परं मूल्यकृता वर्धेत।

प्रक्षेपवृद्धिरुदयार्धम्।

सन्निधानसन्ना वार्षिकी देया।

चिरप्रवासः संस्तम्भप्रविष्टो वा मूल्यद्विगुणं दद्यात्।

अकृत्वा वृद्धिं साधयतो वर्धयतो वा मूल्यं वा वृद्धिमारोप्य श्रावयतो बन्धचतुर्गुणो दण्डः।

तुच्छश्रावणायामभूतचतुर्गुणः।

तस्य त्रिभागमादाता दद्यात्।

शेषं प्रदाता।

दीर्घसत्रव्याधिगुरुकुलोपरुद्धं बालमसारं वा नर्णमनुवर्धेत।

मुच्यमानमृणमप्रतिगृह्णतो द्वादशपणो दण्डः।

कारणापदेशेन निवृत्तवृद्धिकमन्यत्र तिष्ठेत्।

दशवर्षोपेक्षितमृणमप्रतिग्राह्यमन्यत्र बाल-वृद्ध-व्याधितव्यसनि-प्रोषितदेशत्यागराज्यविभ्रमेभ्यः।

प्रेतस्य पुत्राः कुसीदं दद्युः।

अग्राह्याः कर्मकालेषु कर्षका राजपुरुषाश्च।

स्त्री वाऽप्रतिश्राविणी प्रतिकृतमृणमन्यत्र गोपालकार्धसीतिकेभ्यः।

पतिस्तु ग्राह्यः।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

सपादपणा : सवा पण (1¼)।

मासवृद्धिः : प्रतिमास ब्याज।

व्यावहारिकी	:	पण्यक्रयविक्रयव्यवहारप्रयोजना, पण्य के क्रय विक्रय के व्यवहार से युक्त।
सामुद्राणाम्	:	समुद्र के व्यापारियों का (पर)।
श्रोतृणाम्	:	गवाही देने वालों का।
धनिकः	:	ऋण देने वाला।
धारणिः	:	ऋण लेने वाला।
धान्यवृद्धिः	:	अन्न सम्बन्धी ब्याज।
सस्यनिष्पत्तौ	:	फसल के समय पर।
उपार्धा	:	चुकता करना हो।
मूल्यम्	:	मूलधन।
प्रक्षेपवृद्धिः	:	गोदाम के (इकट्ठे बेचे हुए माल) पर ब्याज।
सन्निधानसन्ना	:	लेन-देन सम्बन्धी हिसाब।
चिरप्रवासः	:	विदेश में निवास।
संस्तम्भप्रविष्टः	:	जानबूझकर (खरीददार) माल को न निकालता हुआ।
अकृत्वा	:	अवधि से पहले ही।
आदाता	:	ऋण लेने वाला।
प्रदाता	:	ऋण देने वाला।
दीर्घसत्रम्	:	*लम्बी अवधि तक यज्ञ कार्य में लगा हुआ।*
व्याधि	:	व्याधि (रोग) ग्रस्त।
गुरुकुलोपरुद्धम्	:	गुरुकुल में अध्ययन करने वाला।
असारम्	:	अशक्त व्यक्ति।
नर्णम्	:	न ऋणम्, ऋण नहीं (लेना चाहिए)।
मुच्यमानमृणम्	:	ऋण की अन्तिम (किस्त) रकम अदा करता हुआ।
कारणापदेशेन	:	कारण के बहाने से।
निवृत्तवृद्धिकम्	:	ब्याज के बिना ही।
प्रोषितः	:	प्रवासी।
प्रेतस्य	:	मरे हुए का।
कुसीदम्	:	ऋण।

कर्मकालेषु	:	काम पर लगे हुओं पर।
अग्राह्या	:	गिरफ्तार (बन्दी) नहीं करना चाहिए।
अप्रतिश्राविणी	:	(यदि ऋण चुकाना) स्वीकार न करती हो।
गोपालक	:	ग्वाला।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि दीयन्ताम्**
   (क) पणशतस्य मासवृद्धिः कीदृशी भवति ?
   (ख) शस्यनिष्पत्तौ ऋणं कथं कारयेत् ?
   (ग) श्रावयतः कृते कः दण्डः ?
   (घ) कस्मात् ऋणं न गृह्णीयात् ?
   (ङ) व्यावहारिकाणां कृते का वृद्धिः ?
2. **स्पष्टीक्रियताम्**
   मासवृद्धिः, धान्यवृद्धिः, प्रक्षेपवृद्धिः, निवृत्तवृद्धिः।
3. **अस्य पाठस्य मूलस्रोतः किं वर्तते ?**
4. **अधोलिखितानां कृते ऋणवृद्धिप्रबन्धमेलनं क्रियताम्**

व्यावहारिकः	प्रत्यर्धदण्डः
सामुद्राणाम्	नर्णम्
श्रोतॄणाम्	पञ्चपणाः
गुरुकुलोपरुद्धम्	विंशतिः पणाः

5. **अन्तरं स्पष्टीकुरुत**

आदाता	–	प्रदाता
धनिकः	–	धारणिः
प्रोषितस्य	–	प्रेतस्य
मूल्यम्	–	वृद्धिः